ज्ञान योग

लेखक

परम सन्त कैप्टन लालचन्द जी महाराज

प्रकाशिका

आचार्या डॉ. कमला देवी

पता :

श्री जयमल सिंह एडवोकेट

कोठी नं. 332, सैक्टर-15ए

हिसार-125001 (हरियाणा)

फोन : 01662-244725

सर्वाधिकार सुरक्षित (अप्रैल, 2005)

इस पुस्तक का कोई भी अंश किसी माध्यम से प्रकाशक की लिखित अनुमति के बिना प्रकाशित करना अविधिमान्य होगा।

मूल्य : 15 रूपये

अनुक्रमणिका

क्र.सं.	शीर्षक	पृष्ठ सं.
1.	वन्दना	4
2.	प्राक्कथन	5
3.	भूमिका	7
4.	तत्त्व ज्ञान	9
5.	ज्ञान योग व जीवित मुक्त	11
6.	ध्यान योग	23
7.	विश्वास	35
8.	फकीर मिशन	37
9.	मानवता धर्म के उत्तम जीवन सूत्र	39
10.	मानवता धर्म के प्रचार में सहयोग	43
11.	धर्म का रहस्य	45
12.	योग साधन की विधि	48
13.	सतगुरु जीव को मुक्त करना चाहते हैं	52
14.	सतगुरु जीव को समझ, विवेक, अनुभव और ज्ञान देता है	56
15.	सच्चाई क्या है?	61
16.	श्रेय और प्रेय मार्ग	63

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णु गुरुर्देवो महेश्वरः।
गुरु साक्षात् परब्रह्म तस्मै श्री गुरवे नमः।।

वन्दना

वन्दनम् सतज्ञान दाता, वन्दनम् सत ज्ञान मय।
वन्दनम् निर्वाण राता, वन्दनम् निर्वाणमय।।

भक्ति मुक्ति योग युक्ति, आपके आधीन सब।
आप ही हैं सिन्धु सद्गति, जीव जन्तु मीन सब।।

आप गुरु सतगुरु दया, और प्रेम के भण्डार हैं।
आप कर्त्ता-धर्त्ता हैं, करतार जगदाधार हैं।।

ऋद्धि-सिद्धि शक्ति नौ निधि, हैं चरण में आपके।
बच गया भव दुख से जो, आया शरण में आपके।।

भक्ति दीजै नाम की, सतनाम में विश्राम दे।
राधास्वामी अपना कीजै, राधास्वामी धाम दे।।

प्राक्कथन

मनुष्य बुद्धिजीव प्राणी है जिसके कारण वह अन्य प्राणियों की अपेक्षा श्रेष्ठ माना जाता है। यदि मनुष्य में यह बुद्धि न हो तो पशु व मनुष्य में कोई अन्तर नहीं रह जाता है। जैसे कहा है –

येषां न विद्या न तपो न दानं, ज्ञानं न शीलं न गुणो न धर्मः।
ते मृत्युलोके भुवि भारभूताः, मनुष्यरुपेण मृगाश्चरन्ति।।

अर्थात् जिन मनुष्यों में विद्या, तप, दान, ज्ञान, अच्छा आचरण, गुण व धर्म नहीं हैं वे इस मृत्युलोक में पृथ्वी पर भार स्वरूप हैं और मनुष्य रूप में पशु के समान विचरण करते हैं।

प्रस्तुत पुस्तक 'ज्ञान योग' ज्ञान की दृष्टि से लिखी गई है क्योंकि ज्ञान अध्यात्म की अन्तिम मंजिल है और इसके समान पवित्र अन्य कोई वस्तु नहीं है। जैसे – ''नहि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते'' इस ज्ञान की प्राप्ति होने पर मनुष्य तटस्थ रहता हुआ, सब खेल करता हुआ खुशी–खुशी अपना जीवन व्यतीत कर सकता है। यह पुस्तक ज्ञान–प्राप्ति की सच्ची झांकी प्रस्तुत करती है। वैसे तो यह ज्ञान मैंने संस्कृत का अध्ययन करने के कारण शास्त्रों में काफी पढ़ा है परन्तु इस ज्ञान की स्थिति में रहने वाले मुझे मेरे परम पूज्य प्रातः स्मरणीय कैप्टन लालचन्द जी महाराज पहले ऐसे महापुरुष मिले हैं जो साक्षात् ज्ञान का ही स्वरूप हैं। वह दुनिया का हर खेल करते हुए, सबको समान दृष्टि से देखते हुए, हर समय उस परम तत्व की धार में जुड़े हुए ज्ञान में रत रहते हैं। क्योंकि ज्ञान देना और है और ज्ञान में रहना और है। कुछ लोग केवल शास्त्रों का अध्ययन करके, ज्ञानी बनकर दूसरे लोगों को ज्ञान देना शुरू कर देते हैं और जब उनकी रहनी पर नजर पड़ती है तो पता लगता है कि वे वास्तविक ज्ञान से कोसों दूर हैं। जैसे जलते हुए दीपक से ही दूसरा दीया जलता है उसी प्रकार जिसके अन्दर इस ज्ञान की ज्योत जल उठती है वह दूसरों

को अपने इस ज्ञान की अग्नि से प्रज्वलित कर देता है। मेरे सतगुरु देव इसके साक्षात् प्रमाण हैं। इनके सम्पर्क में जो भी आता है वह इनके ज्ञान की किरणों से प्रभावित हुए बिना रह ही नहीं सकता है। यद्यपि इस पुस्तक में कहीं–कहीं पुनरावृत्ति (Repitation) अवश्य है परन्तु यह पुनरावृत्ति इसीलिए है कि ताकि यह ज्ञान पढ़ने वाले के समझ में आ जाए क्योंकि एक ही बात को बार–बार पढ़ने से बात दिमाग में बैठ जाती है। यह पुस्तक योगियों व साधकों के लिए अत्यन्त लाभदायक सिद्ध होगी।

प्रस्तुत पुस्तक के प्रकाशन में अपना सहयोग देने वाले मेरे भ्राता श्री एडवोकेट जयमल सिंह जी सदैव स्मरणीय हैं और अपना आर्थिक सहयोग देने वाले आचार्य एस.ई. जिले सिंह सांगवान व वीना गुप्ता पुत्री श्री जे.सी. गुप्ता (यू.के.) भी अति धन्यवाद के पात्र हैं जिन्होंने पुस्तक प्रकाशन में अपना सराहनीय योगदान दिया है।

आपकी अपनी
डॉ. कमला, संस्कृत प्राध्यापिका
एम.एम. कॉलेज, फतेहाबाद
दूरभाष : 01667–225520
मोबाइल : 9416475568

भूमिका

यह पुस्तक लिखने का मेरा मुख्य भाव यह है कि मुझे जो गुरु ज्ञान हुआ है इसको मैं मानवता में बांट सकूं। मेरे गुरु पण्डित फकीर चन्द जी महाराज की आज्ञा थी कि खुद अनुभव करके इस अध्यात्म ज्ञान को मनुष्य जाति में बांटा जाना। यह ज्ञान आदि काल से रहस्य में चला आ रहा है। आज के इस बौद्धिक व वैज्ञानिक युग में मनुष्य यह रहस्य जानना चाहता है तथा अध्यात्म ज्ञान में जो भी चमत्कार घटित होते हैं उसका प्रमाण चाहता है।

मुझे जब से गुरु कृपा से इस अपने आत्म तत्त्व का अनुभव हो गया था तब से मैंने गुरु आज्ञा से जब भी समय मिलता था, सत्संग देना शुरू कर दिया था। अपने सत्संगों में मैं अपना अनुभव व सत्संगियों के साथ घटित घटनाओं को बताता रहता था। योग साधन में जो योगी सज्जनों को अनुभव होते हैं, वह उनकी प्रकृति व मन की एकाग्रता के अनुसार होते हैं।

मेरे गुरु महाराज पण्डित फकीर चन्द जी पूरी दुनिया में पहले ऐसे सन्त हुए हैं जिन्होंने धर्म के रहस्य को खोलकर उसे प्रमाण सहित समझाया है। और उनके आदेशानुसार मैंने अपने सत्संगों व पुस्तकों में इस अध्यात्म ज्ञान के रहस्य को अपने अनुभव के अनुसार स्पष्ट वर्णन किया या लिखा है।

आज का बुद्धिजीव इस रहस्य को जानना चाहता है। अत: आज इस अध्यात्म ज्ञान के रहस्य को खोलना अत्यन्त आवश्यक है। इस विषय में मैं अकेला पड़ गया हूं। आज जो भी महात्मा सज्जन मानवता के लिए अध्यात्म ज्ञान का प्रचार कर रहे हैं, वह अभी भी इस अध्यात्म ज्ञान को रहस्य में रख रहे हैं। मैं चाहता हूं कि यदि महात्मा सज्जन इस अध्यात्म ज्ञान के रहस्य को खोल दें तो आज जो धर्म के नाम पर मानवता का आपस में भेद-भाव, ईर्ष्या-द्वेष व मनमुटाव है, वह काफी हद तक कम हो सकता है और मनुष्यों में आपस में प्रेम-प्यार का जीवन हो सकता है।

मैंने इस विषय में जीवन के सभी क्षेत्रों पर प्रकाश डालने का प्रयास किया है। शरीर, मन, आत्मा और सुरत-शब्द की अलग-अलग भक्ति पर अपनी योग्यतानुसार प्रकाश डाला है। अध्यात्म में समझ, विवेक, अनुभूति तथा ज्ञान यह चार बात मुख्य है। मैंने इस पुस्तक में ज्ञान योग का अधिक अनुभव लिखा है। परमात्मा के भक्तों में ज्ञानी सबसे उत्तम है। ज्ञानी व्यक्ति को ही सन्त, पण्डित, जीवन्मुक्त, स्थितप्रज्ञ व पूर्णकामयोगी पुरुष कहा गया है। जब तक व्यक्ति इस ज्ञान की स्थिति को प्राप्त नहीं कर लेता तब तक उसके योग-साधन इत्यादि अधूरे हैं। जैसे कहा है -

योग युक्ति से भ्रम न छूटे, जब लग आपा न सूझे।
कहे कबीर वही सतगुरु पूरा, जो कोई समझे बूझै।।

मैंने इस पुस्तक में ज्ञान योग तथा ज्ञानी की रहनी, उसका योग-साधन तथा दूसरों की वह क्या सेवा कर सकता है? इस विषय पर अपने टूटे-फूटे शब्दों में लिखने का यत्न किया है और पहले जो ज्ञानी या सन्त हुए हैं, उनकी वाणी का प्रमाण दिया है। आशा है यह पुस्तक पाठकों के लिए लाभदायक सिद्ध होगी।

कैप्टन लालचन्द
राजस्थान
दूरभाष : 01562-283121, 283521

तत्व ज्ञान

आत्मा, परमात्मा की समझ, विवेक व अनुभव का नाम ही तत्त्व ज्ञान या अध्यात्म ज्ञान है। मनुष्य आदि काल से ही इस विषय में रूचि व खोज करता रहा है। लगभग सभी देशों में इस विषय की खोज की गई है और अब भी जारी है। इस विषय को अनुभव करने की बहुत सारी विधियाँ है जो महापुरूषों ने मनुष्य की प्रकृति व संस्कार देखकर बताई हैं। सबको एक ही विधि का अनुसरण उचित नहीं होता है। भारत इस अध्यात्म ज्ञान के लिए दुनिया में विख्यात है।

महापुरूषों ने अपनी-अपनी खोज व अनुभव के आधार पर अध्यात्म ज्ञान की कई श्रेणियाँ बताई हैं। जैसे - कर्म योग, निष्काम योग, भक्ति योग, ज्ञान योग इत्यादि। इनमें ज्ञान योग सबसे उत्तम है जिसमें मनुष्य का सहज साधन बना रहता है और वह कीचड़ में कमल के फूल की तरह इस संसार में रहता हुआ, हर खेल करता हुआ उसमें लिप्त न होता हुआ हलका-फुलका बना रहता है।

प्राचीन काल में ब्राह्मणों, ऋषियों व मुनियों ने तत्त्व ज्ञान की खोज में अधिकतर शरीर के स्वास्थ्य व मन की पवित्रता के विषय में ही अधिक लिखा है। जहाँ तक आत्म तत्त्व और परमात्म तत्त्व की खोज की, वह अन्धों के हाथी के समान है। जैसे चार-पाँच अन्धों को एक हाथी मिला। उन्होंने उस हाथी के अंगों को छुआ। जिसके हाथ में जो-जो अंग आया उसने हाथी को उसी के अुनसार बताया। जैसे किसी के हाथ में हाथी की सूंड आई तो उसने कहा कि हाथी नरम व थोथा है। किसी के हाथ में दांत आया तो उसने उसे कठोर व लम्बा बताया, किसी के हाथ में पैर आया तो उसने कहा कि हाथी नीचे से चपटा और ऊपर खम्बे की तरह है। इसी प्रकार किसी के हाथ में कान आया तो उसने हाथी को छाज के समान बताया। यही कारण है कि ब्राह्मण व ऋषि-मुनियों के समय में जो शास्त्र लिखे

गए हैं, वे उनके अनुभव, संस्कार व मन की एकाग्रता के अनुसार है। इसके बाद अवतारवाद के समय जैसे-2 अवतारों ने अनुभव किया और जैसे उनके संस्कार थे उसी तरह उस समय की आवश्यकता के अनुसार उन्होंने अपना ज्ञान बताया। इसी तरह नाथ-सम्प्रदाय के समय घर त्याग कर, वेश-भूषा बदल कर, घर-घर भिक्षा मांग कर उन लोगों ने अपना ज्ञान दिया और जो भी शिष्य उनसे ज्ञान लेने गया उसको अपनी ही तरह भिक्षु बनाकर ज्ञान लेने की पद्धति बताई। इस ज्ञान लेने की श्रेणी में उस समय के राजा-महाराजाओं ने भी इसी प्रणाली को अपनाया जैसे गोपीचन्द, भरथरी इत्यादि।

इसके बाद सन्त मत में सन्तों ने समय के अनुसार अपनी नई पद्धति चलाई जिसमें उन्होंने कहा कि इस ज्ञान प्राप्ति के लिए घर त्यागने व शरीर की वेश-भूषा बदलने की कोई आवश्यकता नहीं है। मनुष्य जहाँ पर हैं, जिस समाज में है और जो अपनी आजीविका कमाने के लिए काम करता है, उस काम को करते हुए ही किसी पूर्ण अनुभवी सन्त की संगत करके, सत्संग सुनकर अनुभूति की सहज विधि सीखकर इस ज्ञान को प्राप्त कर सकता है। इस ज्ञान में उन्होंने मन और शरीर के विषय में संक्षेप में बताया है। अधिकतर सन्तों ने आत्म तत्त्व और महातत्त्व के अनुभव पर अपना ज्ञान केन्द्रित रखा है। यह समय कबीर साहब, गुरू नानक देव, रैदास आदि सन्तों से शुरू हुआ है जिसके अनेक शास्त्र भरे हुए हैं और आजकल जो भी सन्त व तथाकथित सन्त हैं, वे सभी अपने सत्संगों में इन सन्तों के ज्ञान के अनुभव की ही चर्चा सुनाते हैं, अपना अनुभव कम बताते हैं।

जहां तक मेरा अनुभव है उसके अनुसार हमारे पूज्य महापुरूषों ने आत्म-ज्ञान के विषय में अपना जो अनुभव लिखा है, वह ठीक है। जैसे सुरत शब्द का साधन करते हुए आत्म तत्त्व महातत्त्व में सहज ही लीन हो जाता है। अब जहां तक महातत्त्व की बात है, वह अनुभव में नहीं आ सकता है। उसका केवल अनुमान से वर्णन किया जा सकता है, अनुभव नहीं। ❑❑❑

ज्ञान योग व जीवित मुक्त

गुरू जी ने कहा था कि अब तुम्हें ज्ञान-योग में जीवन जीते हुए प्रारब्ध कर्मों को भोगना है। इस ज्ञान योग पर कबीर साहब का शब्द पढ़िये :

साधों एक आप जग माहीं।
दूजा करम भरम है, करितम ज्यों दर्पण में छाईं।।

जल तरंग जिमि जल में उपजै, फिर जल मांही रहाई।
काया छाईं पाँच तत्व की, बिनसे कहाँ समाई।।

या विधि सदा देह गति सबकी, या विधि मन ही विचारो।
आपा होय न्याय करि न्यारो, परम तत्त्व निरवारो।।

सहजै रहे समाय सहज में, ना कछु आये न जावै।
धरै ना ध्यान करै ना ही जप तप, राम रहीम न भावै।।

तीर्थ व्रत सकल परित्यागै, सुनन डोर ना ही लावै।
यह धोखा जब समझि पड़ै, तब पूजे कांही पूजावै।।

जोग जुगत ते भरम न छूटै, जब लग आपा न सूझै।
कहे कबीर सोई सतगुरू पूरो, जो कोई समझै बूझै।।

नोट : (1) ऐसा ज्ञानी यह साधन अभ्यास व खोज करना छोड़ देता है।

(2) जोग जुगत ते भरम न छूटै, जब लग आपा न सूझै।
(3) फिर सतगुरू कौन हैं? जिसको अपने रूप का ज्ञान है।

ज्ञान-योग का एक शब्द महर्षि शिवव्रत लाल जी का भी पढ़े :

पिला दे भक्ति का ऐसा प्याला, ममत्व मैं अपने मन का खो दूँ।
न बुद्धि रहे और न सुधि रहे कुछ, अहम्पना सारा मन का खो दूँ।।

जपूं, तपूं और भजूं न सुमिरूं, न योग युक्ति के पंथ में दौड़ूं।
न नाम की माला हाथ में हो, हिये की माला का मनका खो दूँ।

वह राग क्या जिसमें राग आये, वह त्याग क्या? त्याग में फँसाय।
न बन्ध और मुक्ति का हो खटका, विवेक घर और वन का खो दूँ।।

न दुःख की दुविधा, न सुख की चिन्ता, न चित्त की दुचित्ता का भय हो किञ्चित्।
न ज्ञान और ध्यान की हो इच्छा, विचार साधन यत्न का खो दूँ।।

न द्वन्द्व निरद्वन्द्व का हो झगड़ा, न द्वैत अद्वैत का हो बखेड़ा।।
झुका के सिर राधास्वामी पद में, विचार तक दासापन का खो दूँ।।

आपने ज्ञान योग को समझ लिया होगा कि ज्ञानी इस लोक में परमात्मा का ही रूप है। यह बात गीता में भगवान् कृष्ण ने अर्जुन को भक्तों के प्रकार बताते हुए कही है कि हे अर्जुन! मुझे सभी भक्त प्यारे हैं परन्तु ज्ञानी तो इस लोक में मेरा ही रूप हैं। जैसे कबीर साहब ने अपने शब्द में कहा है -

''सहजे रहे समाय सहज में, न कछु आये न जाये।
धरै न ध्यान करे ना ही जप, तप, राम रहीम न भावै।।''

तीर्थ व्रत सकल परित्यागै, सुन्न डोर ना ही लावै।
यह धोखा जब समझि परै, तब पूज्य काही पूजावै।।

ज्ञानी उसको कहते हैं जो अपने रूप का अनुभव कर लेता है। यह अनुभव तब होता है जब सुरत-शब्द योग पूरा होता है। यह बात बाहर का गुरू सत्संग में बतायेगा।

''शब्द प्रकट तब धरिया नाम, शब्द गुप्त तब हुआ अनाम।''

ज्ञान योग एक मुक्त पद प्राप्त किये हुए मनुष्य की जीवन शैली है। वह हर समय प्रसन्नचित्त रहता है। अधिक समय सम स्थिति में रहकर जीवन लीला का आनन्द उठाता है। मैंने एक पूज्य महात्मा जी को एक पत्र में यह लिख दिया था कि मैं 1962 से मुक्त अवस्था में जीवन जी रहा हूँ। उन पूज्य महाराज जी को बड़ी हैरानी हुई कि ऐसा कैसे हो सकता है? क्योंकि उनका आश्रम बहुत बड़ा है और उनके लाखों शिष्य है। जबकि मैंने न तो कोई सन्त महात्मा का स्वांग बनाया है और न ही शिष्य। न मेरी कोई गद्दी है और न आश्रम। प्रिय पाठकों ! सन्त, मुक्त या ज्ञानी के लिए न तो किसी वेशभूषा या आश्रम की आवश्यकता है और न ही शिष्य की। जहाँ तक मेरी समझ, विवेक व अनुभव है यह गद्दी, आश्रम, मठ व पूज्य महात्मा की वेशभूषा सब इन सज्जनों के बंधन है। इन महात्मा सज्जनों से गृहस्थी कम बंधन में है।

आप देखते हैं आज आश्रमों में कितनी भीड़ है। यहाँ जो शिष्य हैं, सारे भक्त नहीं है। काल कर्म के मारे यहाँ किसी खास प्रयोजन के लिए गुरू जी की शरण लेकर बैठे हैं। पूज्य गुरू जी फंसे हुए हैं। ये इन तथाकथित शिष्यों से बेचैन और अशांत हैं परन्तु इन शिष्यों को निकाल नहीं सकते हैं। यह आश्रम बहुत मेहनत से बनाया हुआ

है। इसमें करोड़ों रूपयों की सम्पत्ति है। इसको छोड़ा नहीं जा सकता है। गृहस्थी के बंधन तो शायद छूट भी जायें मगर गुरूवाई का बंधन तो बहुत बड़ी बेड़ी व हथकड़ी समझो। यदि कोई मुक्त पुरूष इनको सलाह दे कि पूज्य गुरू जी आप इस बंधन को छोड़ दो और अपने किसी प्रिय शिष्य को यह कार्य सौंपकर मुक्त अवस्था में रहकर जीवन का आनन्द लो। तो क्या गुरू जी की हिम्मत है कि आश्रम, मन्दिर तथा मठ की जिम्मेदारी से मुक्त हो जायें ? साधारण मनुष्यों के बंधन तो सभी जानते हैं, परन्तु जो गुरूवाई का सबसे गाढ़ा बन्धन हैं, इसको आम आदमी नहीं जानता। कबीर साहब का एक और शब्द इस मुक्त पुरूष या ज्ञानी की रहनी का पढ़ें :-

भाई सोई सतगुरू संत कहावे, जो नैनन अलख लखावै।
डोलत डिगे न बोलत बिसरे, जब उपदेश दृढ़ावै।
प्राण पूज्य क्रिया ते न्यारा, सहज समाधि सिखावै।

द्वार न रूँधै पवन न रोके, ना ही अनहद उरझावै।
यह मन जाये जहाँ लग जब ही, परमात्म दरसावै।।

कर्म करे निकर्म रहे जो ऐसी जुगती लखावै।
सदा विलास त्रास नाही मन में, भोग में जोग जगावै।।

धरती त्याग आकाश हुँ त्यागे अधर मढैया धावे।
सुन शिखर की सार सिला पर आसन अचल जमावे।।

भीतर रहा सो बाहिर देखे, दूजा दृष्टि न आये।
कहे कबीर बसा है हंसा, आवागमन मिटावै।।

इस शब्द को आपने समझ लिया होगा कि सतगुरू वह है जिसकी यह रहनी है कि वह अलख को लखा देता है। अलख का अनुभव ऐसा है जो न तो चलते-फिरते अलग होता है और न जब बोलता है या सत्संग देता है तब अलग होता है। वह ऐसी सहज समाधि में रहता है और यही सिखाता है। साधन के लिए न तो कान, आँख, मुँह बन्द करता है न प्राणायाम करके रेचक, कुम्भक की क्रिया करता है। यह मन जहाँ जाता है सब परमात्मा का ही खेल या लीला देखता है। हर समय विलास यानी प्रसन्नचित्त रहता है। जब कुछ खाता-पीता है, देखता-सुनता है या जो भी भोग भोगता है उसी में परमात्मा का अनुभव करता है। 100% तो मैं नहीं कह सकता परन्तु 80-85% मैं 1962 से इस रहनी का जीवन जीता आ रहा हूँ। साधारण मनुष्य मेरा सत्संग सुनकर या मेरी पुस्तकें पढ़कर इस बात का विश्वास कर लेते हैं और उनके साथ बहुत से चमत्कार घटित होते रहते हैं। बहुत सज्जनों को उनके विश्वास के अनुसार सत्संग में ही रूप प्रकट हो जाता है। किसी को प्रकाश तो किसी को प्रकाश व शब्द दोनों का अनुभव हो जाता हैं। पूज्य महात्माओं को मेरी यह बात नहीं जंचती है। मेरा अनुभव भी पूज्य महात्माओं के सत्संगों से मेल नहीं खाता है। मैं सत्संगों में अपना अनुभव बताता रहता हूँ।

विश्वासी सज्जन कहते हैं कि जब वे किसी संकट में होते हैं तब मेरा रूप प्रकट होकर उनकी मदद करता है। वे खुली आँखों से मेरा रूप देखते हैं मगर मैं कहीं नहीं जाता हूँ। न मुझे यह ध्यान है कि किसने मेरा ध्यान किया और मैंने उसकी क्या मदद की ? इसके बहुत से उदाहरण है, मगर एक का वर्णन इस प्रकार है :-

राजस्थान में सीकर के नजदीक एक सामेर गांव है। वहाँ एक भंवर कंवर नाम की महिला है। उसका एक बच्चा था जो तेज बुखार

के कारण रात को शान्त हो गया। उसके रिश्तेदारों ने बच्चे को दफनाने की बात की परन्तु भंवर कंवर ने कहा कि इसे सुबह दफना देंगे। उसके पास पं. फकीर चन्द जी की फोटो थी और उन्हीं के प्रसाद से उसे वह बच्चा मिला था। वह उनके रूप के सामने रोकर प्रार्थना करने लगी कि मेरे बच्चे को जीवित कर दो। उस समय मेरे स्वरूप ने प्रकट होकर कहा कि आप रोओ मत, बच्चा तुम्हारा बच जायेगा। उसके बाद सुबह पांच-छः बजे के लगभग बच्चा होश में आ गया। उसके परिवार के लोगों ने इस बात पर आश्चर्य प्रकट किया और दो दिन के बाद उसके परिवार के पांच-सात आदमी व भंवर कंवर उस बच्चे को लेकर होशियारपुर पहुँचे। उस समय मानव-मन्दिर बनना शुरू हो गया था। परम दयाल जी वहां पर बैठे हुए थे। उनको उन्होंने सारी कहानी बताई। और फिर जब मैं छुट्टी के समय परम दयाल जी के दर्शन करने गया तो उन्होंने मुझे यह सारी बात बताई और पूछा कि क्या तुम उस औरत के घर गए थे और जाकर बच्चे के जीवित होने की बात की थी ? मैंने कहा कि महाराज जी मुझे इस बात का कोई ज्ञान नहीं है। तब उन्होंने मुझे इस बात का रहस्य बताया कि तुम उस औरत को और उसके पति को मेरे पास लाए थे और मेरे प्रति यह संस्कार दिया था। तब दुःख की स्थिति में उसके मन ने एकाग्र होकर आपके रूप में प्रकट होकर उसकी मदद की।

इसी प्रकार परम दयाल जी के चोला छोड़ने के बाद उसकी सास ने एक दिन अपनी पुत्रवधु को कहा कि भर्ती ऑफिसर कैप्टन लालचन्द जी ने रात को स्वपन में प्रकट होकर मुझे कहा है कि ठकुराईन जी। मैं तीन दिन के बाद आपको लेने के लिए आऊंगा। आप गुरू घर जाने के लिए तैयार रहना। उसके बाद उसके स्वपन के अनुसार ही मेरे रूप ने प्रकट होकर उसे कहा कि आपके जाने के लिए रेशम

की पालकी लाया हूँ। आप इसमें बैठे, आपको गुरू घर ले चलता हूँ। परम दयाल जी उस पालकी में आगे बैठे हुए थे। उसने यह बात भंवर कंवर (पुत्रवधु) को कही तब उसने कहा कि कहां है- महाराज जी ? तब उसने कहा कि ये सामने खड़े हैं क्या तुम्हें यह नजर नहीं आते ? इतना कह कर उसने दम तोड़ दिया। इसके बाद भंवर कंवर ने आकर मुझे यह बात बताई। इस तरह की घटनाएं आजकल मेरे साथ रोज घटित हो रही है।

मगर तथ्य यह है कि मुझे कुछ मालूम नहीं है। मैं कहीं किसी की मदद करने नहीं जाता हूँ। यही बात प्रसाद की है। लोग प्रसाद बनवा कर ले जाते हैं और उनके ही श्रद्धा व विश्वास से उनका मनोरथ पूर्ण हो जाता है। किसी का मनोरथ पूर्ण नहीं भी होता है। ये क्या रहस्य है ?

मैंने जो कुछ अनुभव किया है उसके अनुसार मनुष्य में चार तत्त्व होते हैं - शरीर, मन, आत्मा और सुरत। ये सब मिलकर कार्य करते हैं। सुरत परमात्मा का सूक्ष्म अंश है। अब खेल इस सुरत का है। मनुष्य का मन प्रेमवश या भयवश जब एकाग्र होता है तब यह सुरत उसके विश्वास के अनुसार इष्ट का रूप बनाकर उसकी सहायता करती है। मनुष्य अपने संस्कारों के अनुसार उसको राम, कृष्ण, देवी, देवता, गुरू, पीर, मोहम्मद, ईसा-मसीह, फरिश्ता आदि समझता है।

मनुष्य के मन का चमत्कार यह है यदि मन पवित्र है तो उसका इष्ट प्रकट होकर होने वाली बात पहले ही बता देता है और यदि मन अपवित्र है तो उट-पटांग बात भी बता सकता है। स्पष्ट बात जो मेरी समझ व अनुभव में आई है वह यह है कि मनुष्य के अन्दर परमात्मा सुरत रूप में अंश के रूप में बैठा है। मनुष्य को बहुत से भ्रम व शंकाएं है। यह परमात्मा की खोज में भटकता फिर रहा है। कोई पूर्ण

अनुभवी गुरू ही इन भ्रम व शंकाओं को दूर कर ज्ञान दे सकता है।

अब राम, कृष्ण, मोहम्मद, ईसा मसीह आदि तो मनुष्य को सच्चाई बताने के लिए आने से रहे। यह रहस्य तो कोई शरीरधारी गुरू या पीर ही बता सकते हैं। मनुष्य को ज्ञान तो शरीर धारी गुरू ही देगा मगर विडम्बना है कि जो गुरू, पीर मैंने देखे हैं वे इसकी बात नहीं करते हैं। सत्संग देते हैं मगर सच्चाई नहीं बताते कि ये चमत्कार या सफलता सब विश्वासी की श्रद्धा व विश्वास का ही फल है। मैंने यह सच्चाई सत्संगियों के भ्रम व शंका दूर करने के लिए साफ बताई है ताकि वे भटकते न फिरें। जहाँ इनका विश्वास है उसको पूर्ण मानकर कार्य करें। सफलता विश्वास का फल है। गुरू का बहुत महत्व है। बिना गुरू के ज्ञान नहीं होता है। ज्ञान जीवन की अंतिम मंजिल है। अपने निज रूप का अनुभव होने के बाद ही बाहर का शरीर धारी गुरू ज्ञान देगा। गुरू ही सब श्रेणियों का अनुभव करायेगा। मन की पवित्रता के लिए सत्संग, साधना, ध्यान की विधि गुरू ही बतायेगा। जो अनुभव व चमत्कार घटित होंगे, उनकी शंका गुरू ही दूर करेगा। कहने का तात्पर्य यह है कि गुरू से सत्संग सुनकर साधना की विधि पूछो। साधना गुरू की देख-रेख में ही हो। कहा गया है:-

''गुरू बिन घट में राह न चलना।
राह में विघ्न अनेकन मिलना।।''

इस समय जो सन्तमत है यही गुरूमत है। ज्ञान देने के लिए आश्रम भी जरूरी है। आश्रम धन से ही चल सकते हैं। धन्य हैं वे गुरू जो मनुष्य को ज्ञान देते हैं और धन्य हैं वे सज्जन जो समझबूझ से मनुष्य की सुख-सुविधा के लिए धन देकर आश्रम बनवाते हैं। मगर एक-तरफ वे तथाकथित गुरू-पीर भी हैं जिनकी चर्चा हम

समाचार-पत्रों व दूरदर्शन पर सुन रहे हैं कि पवित्र स्थानों पर भी वे कार्य हो रहे हैं जो नहीं होने चाहिए।

मनुष्य जीवन की सुख-शांति का अंतिम सहारा धर्म ही है। परमात्मा का सहारा ही मनुष्य जीवन का सबसे बड़ा और पवित्र सहारा है। आज जब गुरू, पंडित, पुरोहित, पीर, शंकराचार्य, साधु-सन्त, मुनि सज्जनों की हालत सुनते हैं तो मनुष्य के विश्वास को भारी आघात लगता है। यह समय सन्तों के अवतारों का है। इसमें कोई वेश-भूषा, शरीर का स्वांग बनाने की आवश्यकता नहीं है। किसी समय भगवां वस्त्र पहनने वाले पवित्र हृदय के, त्यागी, तपस्वी, वैरागी होते थे अब ठग, चोर, बदमाश लोग भगवां वस्त्र धारण करके, स्वांग रचाकर भोले-भाले लोगों को धोखा देते हैं। कबीर साहब का शब्द पढ़े :-

''क्या माला मुद्रा के पहने, चंदन घिसे लिलारा।
मुण्ड मुंडाय सिर जटा रखाये, अंग लगाये छारा।।

क्या पूजा पाहन की कीजे, जो नहीं तत्व विचारा।
सार शब्द सतगुरू का चिन्हे बिन, हो न निस्तार तुम्हारा।।''

ज्ञान का शरीर की कोई आकृति या स्वांग रचाने या वेशभूषा के साथ सम्बन्ध नहीं है। यह तो एक सहज जीवन-शैली है। सहज साधन करना है। कोई योग, जप, तप, तीर्थ व व्रत नहीं करना है। सब छोड़कर प्रसन्नचित्त जीवन जीने की शैली है। यह परम शांति का जीवन है। मनुष्य की प्रकृति भिन्न है अत: सब ज्ञान योग व भक्ति के अधिकारी नहीं है। जब मनुष्य उपराम हो जाता है तब इधर आता है। जैसे :-

सकल कर्म कर थक्यो गुसांई।
सुखी न भयो अब की नाई।। (तुलसीदास)

मैं अपने अनुभव के आधार पर ज्ञानी की रहनी समझाने का यत्न कर रहा हूँ। वैसे तो जो पूर्ण अनुभवी महापुरूष हुए हैं उन्होंने इस ज्ञान योग के विषय में अपनी-अपनी शैली व अपने देश की भाषा में लिखा है। परन्तु कबीर साहब का ज्ञान सीधी-सादी भाषा व शैली में आजकल प्रसिद्ध है। ज्ञानी की रहनी के सम्बन्ध में कबीर साहब का एक और शब्द लिखता हूँ जो मेरे अनुभव से मेल खाता है। इस शब्द के माध्यम से जीवित मुक्त तथा ज्ञानी की रहनी को साधारण शब्दों में समझाया गया है। पहले के महात्माओं की ज्ञान देने की शैली यही थी। शब्द गा-गाकर अपना अनुभव बताते थे। इस शब्द को पढ़ें:

सन्तों सहज समाधि भली।
गुरू प्रताप भयो जा दिन से सुरत न अन्त चली।।

आँख न मून्दू, कान न रूंधू, काया कष्ट न धारूँ।
खुले नयन से हंस हंस देखूं, सुन्दर रूप निहारूं।।

कहूं सो नाम सुनू सोई सुमिरन, खाऊं पीऊं सो पूजा।
गृह उद्यान एक सम देखूं, भाव मिटाऊँ दूजा।।

जहाँ-जहाँ जाऊँ सोई परिक्रमा, जो कुछ करूँ सो सेवा।
जब सोऊं तब करूं दण्डवत, पूजूं और ना देवा।।

शब्द निरन्तर मनुआ राता, मलिन वासना त्यागी।
उठत-बैठत कबहुँ न बिसरे, ऐसी ताड़ी लागी।।

कहे कबीर यह उनमुन रहनी, सो परगट कर गाई।
दु:ख-सुख से परे एक परम पद, तेही सुख रहा समाई।।

ज्ञानी की रहनी ऐसी होती है कि संसार का सब काम करते हुए सहज में उसकी सुरत अन्तर में नाम का अनुभव करती रहती है। कोई योग साधन करने की बात नहीं है। सहज ही सब होता रहता है।

सहजे ही धुन होत है हरदम घट के माहीं।
सुरत शब्द मेला भया, मुँह की हाजत नाहीं।।

इस ज्ञान का नाम ही जीवित मुक्त अवस्था है। ऐसे योगी को सन्त व परम सन्त कहते हैं। यह सहज योग का साधन पहले भी महापुरूष करते आये हैं और आज भी कर रहे हैं। वैसे तो जो भी परमात्मा के नाम का ध्यान, सुमिरन व भजन करते हैं वे सभी पूज्य हैं और धन्य हैं। परन्तु यह सन्त गति या जीवित मुक्त अवस्था का साधन हजारों-लाखों में किसी एक का होता है। जैसे गुरू नानक देव जी ने कहा है :-

''कोटिन में कोई एक जे नारायण चित्त।''

योग साधना भक्ति भाव की चार अवस्थाएँ बताई गई हैं :-

''उत्तमा सहजावस्था, मध्यमा ध्यान धारणा।
अधमा तीर्थयात्रा, मूर्ति पूजा च अधमाधमा।।''

यह ऊपर जो ज्ञानी, जीवित मुक्त पुरुष, सन्त व परम संत की चर्चा की गई है यह सहज अवस्था का साधक होता है। मेरे भाग्य में यह योग बहुत ही सहजता से आया। गुरूजी के दर्शन करने गया था। पहले ही दिन बहुत ही कम समय की संगत से यह शब्द आ गया। गुरु जी की Radiation (विकिरण धारा) का प्रभाव जादुई था। महात्माओं ने जिस शब्द का नाम सार शब्द, निज-नाम, राम-नाम, राधास्वामी नाम, अनहद, उद्‌गीत आदि रखा है, का अनुभव हो गया। इस योग के माध्यम से ही निज रूप या आत्म तत्व का ज्ञान होता है। यह बात सन् 1956 की

है और अब 2006 है। इस सुरत शब्द के सहज अनुभव से बहुत सिद्धि, शक्ति का अनुभव हुआ। मुझे आत्म तत्व का ज्ञान लगभग सन् 1962 में हो गया था। मेरे साथ जो घटना घटित हुई वह अपने पूज्य गुरूजी को बताई। उन्होंने कहा कि सुरत शब्द के साधन का फल आपको मिल गया है। आपको यह अनुभव हो गया है कि आपका निज-रूप क्या है?

अब सहज में प्रारब्ध को भोगो और मुक्त जीवन जीओ यानी साक्षी भाव से परमात्मा का खेल देखते रहो। अन्त में आपकी आत्मा (सुरत तत्व) महातत्व में मिल जायेगी। जो साधक साधना करते हुए जहां मन एकाग्र है वहां के अनुभव से ऊब जाता है, तब ही आगे बढ़ता है। जहाँ सुरत शब्द योग पूरा हो जाता है फिर केवल ज्ञान-योग में यानी मुक्त अवस्था में साक्षी भाव से परमात्मा की लीला देखता है।

❑❑❑

ध्यान योग

ध्यान-साधना के विषय में जो अनुभव मेरा है, वह तो सीधा सुरत शब्द योग का है। यह साधना आम साधक की नहीं है और बहुत कम गुरू-पीर हैं जो मेरे वाले योग का विश्वास करें। अत: मैं आम साधु, महात्माओं की ध्यान-विधि की चर्चा करूंगा। जैसे कहा गया है :-

''ध्यान मूलम् गुरू मूर्ति, पूजा मूलम् गुरू पदम्।
मंत्र मूलम् गुरू वाक्यम्, मोक्ष मूलम् गुरू कृपा।।''

पहले मैं आपको ऊपर के शब्द का भावार्थ बताता हूँ :-

ध्यान मूर्ति में गुरू को ही परमात्मा का रूप मानकर गुरू मूर्ति का ध्यान करना है क्योंकि परमात्मा को आज तक किसी ने देखा नहीं है। पहले किसी बाहर के साकार रूप को परमात्मा या देवता मानकर ध्यान करना पड़ता है। यह मार्ग महात्माओं का अनुभव किया हुआ है और बहुत आसान है। यह आप भक्तों के लिए National Highway है। बहुत सीधा और आसान तरीका है गुरू मूर्ति का ध्यान करना। यह बात जीवित पूर्ण अनुभवी गुरू बेहतर जानता है क्योंकि हर मनुष्य की प्रकृति भिन्न-भिन्न है।

अब बात रही 'पूजा मूलम् गुरू पदम्' वाली। यानी पूजा किसकी की जाए ? पूजा का मतलब इच्छा से है कि हम किसी चीज की इच्छा करें। हम संसारी जीव हैं। हमें जिस चीज का अभाव होगा उसी की इच्छा करेंगे। जैसे - स्वास्थ्य, धन, मकान, दुकान, नौकरी इत्यादि। ऊपर का शब्द केवल परमार्थ के विचार से कहा गया हैं। तो फिर गुरू पद क्या हैं ? परम शांति। गुरू हमको परम-शांति कैसे देगा ? सत्संग में सही समझ व विवेक देगा, अनुभव करायेगा। फिर मन एकाग्र

हो जाएगा तब ज्ञान देगा। तब हमको परम शांति मिलेगी।

आगे कहा है 'मंत्र मूलम् गुरू वाक्यम्' गुरू हमको, जिस वर्णात्मक नाम को जपकर उसका मन एकाग्र हुआ है, वही नाम जपने को बतायेगा। जैसे :- राम नाम, ओम्-ओम् आदि। यह बात भी अनुभवी गुरू मनुष्य की प्रकृति और संस्कार के अनुसार ही बतायेगा।

फिर कहा गया है 'मोक्ष मूलम् गुरू कृपा' जब शिष्य का योग-साधन से ध्यान बन गया अर्थात् मन निश्चल हो गया हो तब गुरू ज्ञान देकर मुक्त, मोक्ष या निर्वाण पद का मार्ग-दर्शन करेगा। अर्थात् ज्ञान-योग का मार्ग-दर्शन जो पहले लिखा गया है, यह बाहर का मुक्त या ज्ञानी पुरूष जिसको सन्त और परम सन्त कहते हैं, वह कृपा कर शिष्य को बतायेगा। और यही सन्त अन्दर-बाहर की लीला का भेद बतायेगा। इसलिये इस पूरे अध्यात्म ज्ञान के लिए बाहर के पूर्व अनुभवी गुरू के मार्गदर्शन की अति आवश्यकता है।

अब मैं ध्यान-योग के विषय में चर्चा पुन: शुरू करता हूँ। राधास्वामी वाणी में लिखा है :-

''गुरू का ध्यान कर प्यारे, बिना इसके नहीं छुटना।
नाम के रंग में रंग जा, मिले तुझे धाम निज अपना।''
''प्रथम सीढ़ी भक्ति गुरू की दूसरी सीढ़ी सुरत नाम की।
गुरू भक्ति बिना काम न रत्ती।''

गुरू भक्ति से मन एकाग्र हो जाता है और गुरू का सूक्ष्म रूप दोनों आँखों के बीच जहाँ स्त्रियाँ बिन्दी लगाती हैं, वहाँ मन की एकाग्रता से ठहर जाता है। साधक को बहुत आनन्द आता है। वह मस्ती, खुशी व आनन्द का अनुभव करता है। प्यारे सज्जनों ! मैंने खुद ने यह साधन नहीं किया है परन्तु जिन विश्वासी जनों का यह साधन बनता है, उन्हीं की कही बताता हूँ। इस सन्दर्भ में कबीर साहब का एक शब्द आपकी सेवा में लिखता हूँ।

''हमन हैं इस्क मस्ताना, हमन को होशियारी क्या?
रहें आजाद या जग में, हमन दुनिया से यारी क्या?

जो बिछुड़े हैं पियारे से, भटकते दर-बदर फिरते।
हमारा यार है हम में, हमन को इन्तजारी क्या?

खलक सब नाम अपने को बहुत कर सिर पटकती है।
हमन गुरू नाम साचा है, हमन दुनिया से यारी क्या?

न पल बिछुड़े पिया हमसे, न हम बिछुड़े पियारे से।
उन्हीं से नेह लागी है, हमन को बेकरारी क्या?

कबीरा इस्क का माता, दुई को दूर कर दिल से।
जो चलना राह नाजुक है, हमन सिर बोझ भारी क्या?

नोट :- जहाँ ध्यान के साथ प्रेम होता है वहां मन की एकाग्रता में मस्ती, खुशी, बेफिक्री, प्रसन्नता बेहद होती है। इस तरह की एकाग्रता से इच्छा-शक्ति बढ़ जाती है और सिद्धि-शक्ति बहुत अधिक होती है। मन की एकाग्रता से इष्ट का रूप प्रकट होता है। ऊपर के शब्द में तीन बातें हैं - ध्यान, विश्वास और इष्ट के प्रति प्रेम। एक सहारा ही भक्त को बहुत है जहाँ तीन सहारे एक साथ हों तो उनका कहना ही क्या है। यह भक्ति ही है जिसके सहारे से भक्त उत्साह, उमंग व प्रेमभाव से जीवन सुन्दर बना जाता है। कोई इष्ट बनाकर जो भक्ति करता है, यह मन की भक्ति है और गुरू बनाकर, गुरू को परमात्मा मानकर जो ध्यान योग करता है वह भी मन की भक्ति है। इस भक्ति से मनुष्य को ज्ञान हो जाता

है क्योंकि गुरू सत्संग द्वारा सही समझ व विवेक देता है और अनुभव करने के लिए सहज ध्यान की विधि बता देता है। शरीर रूप में हाजिर, पूर्ण अनुभवी गुरू अनुभव करा कर हमें समझ, विवेक, अनुभव व ज्ञान प्रदान कर सकता है। देवताओं या गुजरे हुए गुरू पीरों के ध्यान से सांसारिक सफलता तो मिल जाती है लेकिन ज्ञान तो जीवित अनुभवी गुरू के सत्संग से ही होगा।

जिस ध्यान योग के विषय में मैं बता रहा हूँ यह केवल मन की भक्ति है। यह मन चंचल है और इस चंचलता के कई कारण है। इस मन को इष्ट का ध्यान कर निश्चल करना है। इस विषय में एक शब्द नीचे दिया है। ध्यान से पढ़ें और समझें :-

''साधो मन को सूझ सुझाओ।''

मन को साधो मन परबोधो, मन को लगाम लगाओ।
मन की दुविधा दूर निकारो, चंचल मन ठहराओ।।

मन की खटपट सकल मिटाओ, उलझा मन सुलझाओ।
मन है अटपट मन है लटपट, झटपट मन बिलगाओ।।

शुभ संकल्प की राह बाट में, मन का घोड़ा दौड़ाओ।
राह रूकाना गुरू से पूछो, मन की चाल न जाओ।।

सहस्र कमल दल कमल निहारो, दूजे त्रिकुटी आओ।
तीजे सुन्न महासुन्न निरखो, भंवर में बंसी बजाओ।।

सत लोक चढ़ सुनो बीन धुन, मंगल साज सजाओ।
राधास्वामी चरण-शरण बलिहारी, अजर-अमर पद पाओ।।

आप ध्यान योग की आवश्यकता समझ गए होंगे कि मनुष्य का मन महाचंचल है। इसको सम रखने के लिए बहुत से सूत्र या विधियाँ हैं। मनुष्य की प्रकृति व संस्कार देख कर अनुभवी महापुरूष उसको सहज-विधि बता देता है। जैसे अनुभवी डॉक्टर मनुष्य के रोग को समझकर उसको उचित दवा दे देता है या अनुभवी वैद्य या हकीम रोग को समझ कर उचित दवा देकर परहेज बता देता है। इसी प्रकार आध्यात्मिक गुरू मन व आत्मा का विशेष जानकार होता है। इसलिए मन से अशांत मनुष्य को उचित ध्यान-योग की विधि बताकर वह उसे जरूरी परहेज बता देता है। इस लोक में मनुष्य को कई प्रकार के कष्ट हैं परन्तु अधिकांश लोग मन के दु:खों से पीड़ित हैं। जिसका पूर्ण और सही इलाज तत्व ज्ञान का पूर्ण अनुभवी सज्जन (Master of Spiritual Psychology) ही कर सकता है।

मैं आपकी सेवा में ध्यान योग के विषय में लिख रहा हूँ। योग का मतलब है -'योगश्च चित वृति निरोध:' यानी मन पर बहुत सारे Negative और Positive, घटिया और बढ़िया संस्कार पड़े हुए हैं जो देखने, सुनने, पढ़ने, छूने से हम ग्रहण करते रहते हैं। सबसे पहले तो इस संसार का जीवन सुन्दर बनाने के लिए घटिया संस्कार यानी Negative विचार हटाकर शिव संकल्प अर्थात् सुन्दर विचार रखें जाए तो इस लोक का जीवन सुन्दर बन जायेगा। बाद में यदि कोई सदा के लिए अमर होना चाहे यानी आवागमन ही मिटाना चाहे तो घटिया और बढ़िया दोनों तरह के संकल्पों से ऊपर का योग गुरू जी से सीखें। बात मन पर काबू करने की है। कबीर साहब का शब्द पढ़ें :-

शब्द

''साधो यह मन है बड़ा जालिम''
जाको मन से काम परो है, तिस ही को है मालूम।।

मन कारण जो उनको छाया, तेहि छाया में अटके।
निरगुण सरगुण मन की बाजी, खरे सयाने भटके।।

मन ही चौदह लोक बनाया, पाँच तत्व गुन तीन्हें।
तीन लोक जीवन बस कीन्हे, परै न काहु चीन्हें।।

जो कोऊ कहे हम मन को मारा, जाके रूप न रेखा।
छिन-छिन में कितनो रंग लावै, जो सपनेहुँ नहीं देखा।।

रसातल इक-इक ब्रह्माण्ड, सब पर अदल चलावे।
षट रस में भोगी मन राजा, सो कैसे के पावे।।

सबके ऊपर नाम निरच्छर, तहँ ते मन को राखै।
तब मन की गति जानि परे, सत कबीर मुख भाखै।।

कबीर साहब का एक और शब्द पढ़ें :-

काहू न मन बस कीना, जग में काहू न मन बस कीना।
श्रृंगी ऋषि से बन में लूटे, विषै विकार न जाने।
पठई नारि भूप दसरथ ने, पकरि अयोध्या आने।।

सूखे पत्र पवन भाष रहते, पाराशर से ज्ञानी।
भरमे देख रूप बनिता को, काम कन्दला जानी।।

सोई सुरपति जाकी नारि सुची सी, निस दिन संग राखी।
गौतम के घर नारि अहिल्या, निगम कहत है साखी।।

पारवती सी पतिनी जाके, ताको मन क्यों डोले।
खलित भय छबि देख मोहिनी, हा हा कर के बोले।।

एकै नाम केवल सुत ब्रह्मा, जग उपराज कहावे।
कहे कबीर एक मन जीते, बिन जीव आराम न पावे।।

इस मन का रूप समझने के लिए महर्षि शिवव्रत लाल जी का शब्द पढ़ें :-

''साधो यह मन समझन योग।
मन ही ज्ञान और मन ही ध्यान है, मन ही मोक्ष और भोग।।

मन में वेद को पढ़ते ब्रह्मा, शंकर करते योग।
मन ही अन्दर सृष्टि व्यापी, मन ही में है रोग।।

मन गोविन्द मन गोरख रूपा, मन ही योग वियोग।
मन ही पानी मन ही अग्नि है, मन ही आनन्द सोग।।

मन गुरू है मन ही चेला, मन ही ब्रह्म संयोग।
मन ही का व्यवहार जगत में, नाहीं जाने लोग।।

योगी सज्जन सूक्ष्म लोक के अनुभव का आनन्द ध्यान में लेते रहते हैं और बिना पूर्ण अनुभवी गुरू (Master of Spiritual Psychology) के इन लोकों में कई जन्मों तक फंसे रहते हैं।

गो गोचर जहाँ मन जाहि, सो माया कृत जानो भाई। (तुलसीदास)

मतलब यह है कि ध्यान में जो कुछ रंग, रूप, रेखा का अनुभव है, वहाँ तक मन साथ है। यह कोई घटिया बात नहीं है। यह सब दरजे अपने-अपने स्थान पर अति उत्तम हैं। योगी जो अनुभव करता है कुछ समय के बाद उससे ऊब जाता है और तब आगे बढ़ता है। ऐसे ही चलते-चलते मंजिल पर पहुँच जाता हैं। इस साधना या ध्यान-योग में योगी आनन्द, खुशी, सिद्धि-शक्ति व नये-नये नजारे देखता है जिससे उसका जीवन सुन्दर हो जाता है।

आजकल जैसे शिक्षा में लोग धनबल से डिग्री खरीद लेते हैं। परन्तु पढ़ाई का वास्तविक आनन्द तो वे ही ले सकते हैं जिन्होंने पहली कक्षा से पी.एच.डी. तक की डिग्री अच्छे से पढ़कर की हैं। मेरा भाव आप समझ गए होंगे कि जो ध्यान योग का साधन करते हैं और मेहनत, लगन, प्रेम, विश्वास भाव से धीरे-धीरे इस आत्म-तत्व के अनुभव तक पहुँचते हैं, वे धन्य हैं।

प्यारे पाठको! मैंने यह बात अपने अनुभव से लिखी है। मुझे यह तत्व ज्ञान अर्थात् आत्मा की अनुभूति वाला योग जिसे राम नाम, राधास्वामी नाम या सार शब्द कहा है, केवल गुरू जी के दर्शन और थोड़ी सी संगत व Radiation से सहज प्राप्त हो गया था। इसके लिए मुझे कोई मेहनत, जप, तप, सुमिरन व ध्यान नहीं करना पड़ा। फिर जल्दी ही गुरू आज्ञा से मैंने सत्संग देने शुरू कर दिये। बहुत मान-सम्मान मिला और मिल रहा है। परन्तु मैं जानता हूँ कि मैं कुछ करता नहीं हूँ, न किसी में जाकर प्रकट होता हूँ। यह सब विश्वास करने वालों के मन की सिद्धि है और नाम मेरा होता है कि गुरू जी बहुत सिद्धि-शक्ति वाले हैं। लोग सेवा करना चाहते हैं परन्तु मैं डरता हूँ कि जब तू कुछ करता ही नहीं तो तेरे को क्या हक है सत्संगियों से सेवा लेने का ? इसीलिए मैंने कोई आश्रम या शिष्य नहीं बनायें। मुफ़्त में ज्ञान का

दान करता हूँ। यदि कोई हठ से देना चाहे तो भक्त का मान रखने के लिए उससे लेकर किसी जरूरतमन्द को दे देता हूँ। मुझे तो मुफ़्त में ज्ञान मिला हुआ है इसलिए मुफ्त ही बांटता हूँ। मैं धन्य समझता हूँ उन महात्माओं व सज्जनों को जिनको जप, तप, सेवा व बहुत योग साधन व अभ्यास के बाद ज्ञान हुआ है। इन सज्जनों ने बहुत तप, जप किया, गुरूओं की सेवा की है। अत: इस ज्ञान की वे ही कदर करते हैं। मैं आपकी सेवा में महर्षि शिवव्रत लाल जी का शब्द लिखता हूँ, इससे आप भली प्रकार से समझेंगे। इसमें ध्यान-योग का तरीका है और परिश्रम का मूल्य भी है।

दिल में अगर तड़फ न हो, आदमी आदमी नहीं।
खुद से न हो जो बेख़बर, खेल है बन्दगी नहीं।

जिसका इलाज हो सके, वह दर्द दर्द ही नहीं।
जो सकून से जी सके, वह जिन्दगी जिन्दगी नहीं।।

तीर पे तीर खाये जा, उससे तू लौ लगाये जा।
आहें न भर न लबों को सी, यह इश्क है दिल्लगी नहीं।।

तेरे कर्म से बेमियां, कौनसी शै मिलती नहीं।
झोली ही तेरी तंग है, उसके यहाँ कमी नहीं।।

सिजदा से तू तो मगर, इंसान में पुख्तगी नहीं।
कायले बन्दगी तो हूँ, काबिले बन्दगी नहीं।।

नोट :- ध्यान योग में जो यह जानता है कि इष्ट का ध्यान करते

हुए जो रूप प्रकट होता है, वह तो मेरा ही मन है तो ऐसे ज्ञान वाले को इष्ट का रूप प्रकट नहीं होगा। उसको न आनन्द-खुशी मिलेगी और न कोई सिद्धि-शक्ति होगी। क्योंकि ध्यान बनने से ही मन एकाग्र होगा और मन की एकाग्रता से ही इच्छा शक्ति बलवान होती है। मैं आप की सेवा में अपना यह अनुभव लिख रहा हूँ कि मेरी प्रकृति या कर्म कुछ और थे। धन्य है वह सज्जन जिनका इष्ट का ध्यान बन जाता है। ध्यान का यह पहला दर्जा है और यह बहुत ही आवश्यक है। परन्तु इसके साथ ही पूर्ण अनुभवी का सत्संग भी बहुत जरूरी है। केवल ध्यान करना ही पर्याप्त नहीं है। यदि सत्संग नहीं सुनोगे तो यह ध्यान हानिकारक होगा। शिव संकल्प बहुत जरूरी है और काम, क्रोध से परहेज भी आवश्यक है।

''जहां काम तहां नाम नहीं, जहां नाम नहीं काम।
रवि रजनी दोऊं ना मिले एक ठौड़ एक ठाम।।''

आपको सत्संग में समझ व विवेक मिलेगा। मानसिक व शारीरिक ब्रह्मचर्य ध्यान के लिए अति आवश्यक है। यदि वह इनका पालन नहीं करेगा तो उसका दिमागी संतुलन बिगड़ सकता है। अत: ध्यान गुरू की देख-रेख में किया जाये। सन्तान उत्पत्ति के लिए गृहस्थी संभोग करे न कि स्वाद के लिए। ध्यानी को चाहिए कि वह ब्रह्मचर्य नष्ट ना करें।

गीता में निष्काम योग को बहुत ही सुन्दर ढ़ंग से समझाया गया है ताकि क्रियमान् कर्म न बने। इसमें कहा गया है कि आप मन लगाकर जो कर्म करते हैं उसमें दो बातों का ध्यान रखें। पहली तो यह कि हमेशा हर काम परमात्मा का ही समझ कर करें व दूसरी यह कि कर्म करें परन्तु फल की इच्छा परमात्मा पर छोड़ दें। इससे आपका नया क्रियमान् कर्म

नहीं बनेगा। इस प्रकार कर्म करने वाला व सभी कार्यों को ज्ञान की अग्नि में जलाकर भस्म करने वाला मुक्ति पद तक पहुँच जायेगा। यह सब समझ, विवेक मनुष्य को सत्संग में मिलती हैं। सत्संग की बड़ी महिमा है। जैसे कहा गया है :-

सत संगति मद मंगल मूला, सो ही फल सिद्धि सब साधन फूला।
सबे सुलभ सब दिन सब देशा, सेवत सादर सुमन कलेशा।।

यदि मनुष्य पूरे ध्यान से आदर, सम्मान व श्रद्धा भाव से सत्संग सुनता है तो सब कलेश उसी समय दूर हो सकते हैं। मेरा अनुभव यह है कि मैं गुरू जी के पास केवल एक इच्छा लेकर गया था कि भजन क्या होता है ? दुनिया तो मेरी बनी हुई थी और किसी बात का अभाव नहीं था। उन्होंने जो कहा उसको ध्यान से सुना और सुनकर उन्होंने जैसा कहा वैसा ही किया। 15 या 20 मिनट में ही उनकी Radiation से अन्दर का सार-शब्द खुल गया था। यह घटना सन् 1956 की है। अब 83 वर्ष की उम्र है। परम शांति से जीवन का आनन्द ले रहा हूँ। यह भाव सत्संग का है। मेरे मन में यह एक लालसा थी कि भजन क्या होता है? इसकी जानकारी के लिए मैं कई महात्माओं से मिला परन्तु यह बात हल नहीं हो सकी थी। वास्तव में जिन पूज्य महात्माओं से मैं उस समय मिला उनका भजन बना ही नहीं था।

''नानक नदरी नदर निहाल'' यह घटना मेरे साथ परम दयाल (पंडित फकीर चन्द जी महाराज) के दर्शन और थोड़े समय के संग से ही निहाल कर देने वाली थी। यह लोक संकल्प का है। जिसके जैसे विचार होते हैं वैसा ही जीवन बन जाता है। यह समझ, विवेक जीव को सत्संग से मिलती है। सत्संग कराने वाले और करने वाले जिस भाव या नीयत से कराते और करते हैं उसका विशेष प्रभाव होता है। राधास्वामी वाणी में गुरू चेले पर एक शब्द है :-

गुरू चेला व्यवहार जगत में, झूठा बरत रहा।
का से कहूँ समझ नहीं काऊ, धोखे धार भया।।

गुरू तो मान प्रतिष्ठा चाहे, चेला स्वार्थ संग बन्धा।
लोभी गुरू लालची चेला, दोनों नरक कुण्ड में खेला।।

गुरू भी दुर्लभ चेला भी दुर्लभ, कहीं जोग से मेल भया।
सच्चा मार्ग सुरत शब्द का, सो अब गुप्त भया।।

मैं आपको ध्यान-योग के विषय में बता रहा हूँ। ध्यान में मन को एकाग्र करने की विधि, फिर आत्मा का अनुभव, प्रकाश को इष्ट मानकर आत्म-आनन्द व अन्त में परमशांति के लिए सुरत-शब्द का योग है। परन्तु सबके लिए एक ही विधि उपयुक्त नहीं हो सकती। मनुष्य की प्रकृति के अनुसार ही सारा खेल है। जैसे मैंने पहले दिन से अभी तक केवल सार-शब्द का ही सहज अनुभव किया है। अब सहज समाधि बनी रहती है। परन्तु यह सब मनुष्यों की प्रकृति, संस्कार या कर्म गति पर निर्भर है। परमात्मा मनुष्य के अन्दर छोटे अंश सुरत रूप में है जो यह खेल-खेल रहा है। यह सब उस सूक्ष्म तत्व की लीला है जो अपरम्पार है। मनुष्य के अन्दर बैठा वह उस महातत्व को जानने की लीला कर रहा है। इस खेल में जब मनुष्य को अपने आत्म-तत्व का ज्ञान हो जाता है तब वह सब खोज करना छोड़ देता है। रहस्य समझ में आ जाता है कि किस की खोज करे और कौन करें।

''सन्तो एक आप जग माही।''

यहाँ आकर ज्ञान, ध्यान सब पूरे हो जाते हैं। सब कुछ परमात्मा की मौज पर छोड़ दिया जाता है। ❑❑❑

विश्वास

आज सुबह लगभग 7 बजे जयपुर से शांता का फोन आया और कहा कि वह दो दिन से बीमार है। होमियोपैथी की दवा ले रही है। आराम नहीं आ रहा है। बहुत तकलीफ है। शाम को जल्दी ही वह दवा लेकर सो गई और रात को उसने देखा कि मेरा रूप प्रकट हुआ और कहा कि तेरे को कोई बीमारी नहीं है, चलो किसी दूसरे डॉक्टर से दवा दिला देता हूँ, ठीक हो जाओगी। कहती है दूसरे डॉक्टर से आपने दवा दिला दी। फिर वह गहरी नींद में सो गई। सुबह उठी तब कोई कष्ट नहीं था। बहुत हल्की उठी और पूरा दिन आनन्द व खुशी से बीता।

यह सब उसके मन का विश्वास था। जब मैं जयपुर जाता हूँ, इनके घर ठहरता हूँ। यह और इनके पति व बच्चे बहुत सेवा करते हैं। इसके साथ बहुत चमत्कारी घटनाएं घटी हुई है। इसका लड़का व लड़कियां सब विद्वान् और अधिकारी हैं। इन सब के साथ कई चमत्कारी घटनाएं घटी हुई हैं। मगर सच्चाई यह है कि मेरे में कोई सिद्धि-शक्ति नहीं है, सब इनके विश्वास और श्रद्धा का फल है।

जयपुर की जितनी संगत है उसको मैंने सत्संग करा कर, समझा कर कँवर सिंह जी महाराज को बुलाकर उनको सौंप दिया और कहा कि अब से आपके गुरू संत कँवर सिंह जी महाराज हैं। मैंने किसी को शिष्य नहीं बनाया। संगत ने मुझे गुरू माना था। मैंने किसी को नाम नहीं दिया था इसलिए सारी संगत को पूज्य महाराज जी से नाम दिला दिया। अब जयपुर की संगत उनके पास ही जाती है। भीलवाड़ा की संगत पहले पूज्य परम दयाल जी, फिर मानव दयाल जी को गुरू मानती थी। मगर जब मानव दयाल जी वहाँ नहीं जा सकते थे तब उन्होंने मुझे वर्ष में एक-दो बार सत्संग देने की आज्ञा दी थी। मेरे सत्संग सुनने के बाद उनके साथ चमत्कारी घटनाएं घटित होने लगी। भीलवाड़ा की संगत को

मेरे प्रति विश्वास हो गया और कई सज्जनों के साथ विशेष चमत्कारी घटनाएं होने लगी। वहां के सत्संगी सेठ साहूकार हैं। वे मेरी सेवा हर तरह से तन, मन, धन से करना चाहते थे, परन्तु जैसा मैंने पहले लिखा है कि मैं 1962 से मुक्त अवस्था में जीवन जी रहा हूँ। यह सेवा तो उन गुरूओं के लिए आवश्यक हैं जो आश्रम, मंदिर व मठ बनाकर बैठे हैं। उनको संगत की सुविधा के लिए सेवा की आवश्यकता है। आखिर जब प्यारे जनरल साहब (V.N. Negi ji) गुरू गद्दी पर आये तब उनको बुलाकर वहाँ की संगत को बता दिया कि प्यारे सज्जनों! अब आपके गुरू प्यारे जनरल साहब हैं। इनको गुरू मानकर इन्हीं को बुलाओ। खूब सेवा करो व धन शुभ कार्य में लगाओ।

यह सारा खेल मनुष्य के विश्वास, प्रेम व श्रद्धा का है। धर्म रूपी वृक्ष विश्वास की जड़ों पर खड़ा है। मैं जहाँ भी सत्संग देता हूँ मेरे सत्संगों में लगभग सभी गुरूओं के विश्वासी व प्रेमी सज्जन बैठकर लाभ उठाते हैं। सनातनी, आर्य समाजी, साईं बाबा के विश्वासी, राधास्वामी पंथ के लगभग सभी आश्रमों के पूज्य गुरूओं के शिष्य मेरे सत्संग को ध्यान से सुनते हैं व मेरे प्रति श्रद्धा भाव रखते हैं और मेरी पुस्तकें जो भी अध्यात्म ज्ञान का जिज्ञासु पढ़ता है, वह सच्चाई से प्रभावित होता है। मेरे गुरू पूज्य पण्डित फकीर चन्द जी की यह इच्छा थी कि धर्म में अभी तक जो रहस्य रहा है उसको आज के बुद्धिजीवी व वैज्ञानिक मनुष्य को खोलकर साफ बताया जाए कि धर्म विश्वास का विषय है। सिद्धि-शक्ति किसी गुरू-पीर में नहीं है, यह विश्वास करने वाले मनुष्य में है। यानी परमात्मा का सूक्ष्म अंश हर मनुष्य में सुरत रूप में है। गुरू जिसने मनुष्य रूप में अपना अनुभव कर लिया है, वही दूसरों को यह सच्चाई बताकर मार्ग-दर्शन करें। आज के तथाकथित अनुभवहीन महात्मा भोले-भाले व मानसिक रूप से अशाांत लोगों को भटका रहे हैं। आवश्यकता है इन प्यारे सज्जनों को चेताने की कि भटको मत। परमात्मा आपके अन्दर है। उसका अनुभव करो और अपने आप को जानो। ❑❑❑

फकीर मिशन / मानवता धर्म / मज़हब-ए-इंसानियत

आज के समझदार व बुद्धिमान् मनुष्य के लिए पूरी दुनियां के धर्म सम्प्रदायों (Sects) के नाम मानवता धर्म में आसानी से आ जायेंगे। हिन्दु, मुस्लिम, ईसाई या किसी अन्य धर्म के व्यक्ति सभी इंसान है। अर्थात् दुनिया के सभी मनुष्य पहले इंसान है, बाद में धर्म आता है। दूसरा, परमात्मा भी सबका एक ही है। अलग-अलग प्रदेश, भाषा व सम्प्रदाय के अनुसार लोगों ने उसके नाम अलग-अलग रखे हैं। फिर हर मनुष्य में जो आत्मा (रूह) है वह भी एक जैसी ही है। मुख्य जरूरते भी सभी इंसानों की एक ही जैसी है। जैसे रोटी, कपड़ा और मकान। दुनिया के सब इंसान भाई-भाई हैं। अनुभवहीन धर्म गुरूओं ने इन्सान को धर्म सम्प्रदायों में बाँटकर इंसान को इंसान का शत्रु बना रखा है। आज का मनुष्य बुद्धिमान् व समझदार है। धर्म की बात समझता है और अगर धर्म का अनुभव करना चाहे तो किसी पूर्ण अनुभवी आत्म-तत्व ज्ञानी (Master of Spiritual Psychology) से विधि या तरीका सीखकर अपने आप को जानने का ज्ञान प्राप्त कर सकता है। मनुष्य चार तत्वों से मिलकर बना है :- शरीर (Body), मन (Mind), आत्मा (Soul) और सुरत (Attention)। ध्यान योग से बहुत आसानी से यह अनुभव हो सकता है। मेरे गुरू महाराज पंडित फकीर चन्द जी की यह इच्छा थी कि यह मानवता धर्म पूरे विश्व में प्रचारित हो और सभी बुद्धिमान् मनुष्य इसको समझें और अनुभव करें और फिर वो पूरी मानवता को यह ज्ञान बाँटें। सारी इन्सानियत का धर्म एक ही है। जिसको आत्म-ज्ञान या रूहानियत का ज्ञान कह सकते हैं। चाहें तो यह ज्ञान किसी पूर्ण अनुभवी महात्मा, फकीर या संत की संगत में (Practical Method) प्रयोगात्मक विधि

पूछकर ध्यान योग के साधन से खुद अनुभव कर लो, नहीं तो उस मालिक का विश्वास ही काफी है। वास्तव में अपने आत्म-तत्व का ज्ञान ही अध्यात्म है।

साधारण मनुष्य के लिए इतना ही काफी है कि मालिक अंश रूप से हर मनुष्य में है। उसका कोई रूप नहीं है। सब में हर जगह वह हाजिर है। उसका सहारा लेकर काम करो। अपनी नीयत ठीक रखो। अपने संकल्प आशावादी और सकारात्मक (Positive) रखो। जैसा सोचोगे वैसा ही जीवन बन जायेगा। मनुष्य-मनुष्य की सहायता करे। परमात्मा न मंदिर में, न मस्जिद में, न चर्च में, न गुरूद्वारों में व न अन्य किसी तीर्थों में है। वह तो हर इंसान के मन में है। अपनी जाति गरज अर्थात् स्वार्थ के लिए किसी का मन मत दुखाओ। किसी के धर्म की बुराई मत करो व आपस में मिलजुल कर प्रेम से सुन्दर जीवन जीना सीखो। यही मानवता धर्म है।

❑❑❑

मानवता धर्म के उत्तम जीवन सूत्र

ये मानवता धर्म के नियम किसी एक सम्प्रदाय व धर्म के लोगों के लिए नहीं है। पूरी मानव जाति का यह मानवता धर्म, मजहब-ए-इंसानियत, Religion of Humanity है। सबके लिए नीचे लिखे सिद्धान्त आवश्यक है :-

* घरेलु शांति अति आवश्यक है।
* आय से व्यय कम करो और सुखी रहो।
* जब तक शरीर साथ दे, कमाकर खाओ।
* हमेशा शिव संकल्प रखें और आशावादी रहें।
* जीवन है तो जहान् है।
* वीर्य ही जीवन शक्ति है, केवल संतान के लिए ही संभोग करें।
* राष्ट्र का निर्माण माताएँ करती हैं, न कि नेता।
* याद रखो हम राष्ट्र के ऋणी है।
* माँ-बाप का ऋण कभी उतर नहीं सकता।
* मन को वश में करने के लिए योग का सहारा लें।
* अपनी गरज के लिए दूसरों का मन न दुखायें।
* दया, क्षमा, सेवा व प्रेम मनुष्य के गहने हैं।
* दूसरों के काम आयें, शांति मिलेगी।
* जैसा व्यवहार आप अपने साथ चाहते हैं, दूसरों के साथ वैसा ही व्यवहार करें।
* आपके कर्म से दूसरों को सुख मिले, यही शुभ कार्य है।
* शुद्ध कमाई की कोई बराबरी नहीं।
* मनुष्य गुरू बगैर अधूरा है।

* मानव चोला दुर्लभ है, किसी खास ध्येय के लिए मिला है, इसे व्यर्थ न गंवाओ।
* मनुष्य के भ्रम केवल सतगुरू ही दूर कर सकता है।
* दु:खी जीव की सहायता करें, इससे आपको लाभ मिलेगा।
* पहले इंसान बनो, इंसानियत से रूहानियत मिलेगी।
* सौ वर्ष की इबादत से ढ़ाई घड़ी का सत्संग बेहतर है।
* नफरत के बदले नफरत, प्रेम के बदले प्रेम मिलेगा।
* मनुष्य अपने ही कर्म से सुखी व दु:खी होता रहता है।
* सुरत-शब्द योग मुक्ति मार्ग है।
* संत दुर्लभ रत्न है, उसकी खोज करो।
* जो होना है वह होगा। कर्म गति ठहरती नहीं। फिर शोक व दु:ख क्यों ?
* शहद की मक्खी की तरह गुणग्राही बनो।
* जब तू अपने आपको जान लेगा, कोई प्रश्न बाकी नहीं रहेगा।
* कोई किसी का नहीं, सब अपने हैं।
* सब कुछ मनुष्य के अन्दर है, बाहर से कुछ नहीं आता है।
* नशा नाम नाश का है।
* नाम धुनात्मक है, वर्णात्मक एक विश्वास है।
* सत्य केवल एक है जो अनुभव किया जा सकता है।
* सतगुरू एक है जो समझ, विवेक, अनुभव और ज्ञान देता है।
* सभी धर्मों, सम्प्रदायों का उद्देश्य एक है, वर्णन शैली भिन्न-भिन्न है।
* मन चञ्चल है, एक इष्ट बनाओ और काम करो।
* आज की राजनीति मीठा ज़हर है, इसकी प्रणाली बदलो।
* मानवता धर्म का सार है - लोक सुखी, परलोक सुहेले।

''यानी लोक, अलोक पाऊं सुख धामां।।''

मेरे गुरू जी (पण्डित फ़कीर चन्द जी) ने 1947 में हिन्दुस्तान-पाकिस्तान के बंटवारे के समय हिन्दू और मुसलमानों को बुरी तरह लड़ते देखा जो पहले एक साथ भाईयों की तरह रहते थे। धर्म के नाम पर तब बहुत खून-खराबा हुआ। इस घटना ने उनके मन पर बहुत प्रभाव डाला। उन्होंने अपने मकान 18, रेलवे मंडी, होशियारपुर में एक झण्डा लगाया और उस पर लिखा - Be Man/मनुष्य बनो/इंसान बनो। यह उक्ति उन्होंने त्रि-भाषा अंग्रेजी, हिन्दी व पंजाबी में लिखी। मानवता से सम्बन्धित एक मासिक पत्रिका भी वह अलीगढ़ से छपवाते थे। जिसमें उन्होंने लिखा कि धर्म व सम्प्रदाय की गलत समझ से मनुष्य इन्सानियत को भूलकर जानवरों की तरह लड़ता है। उसी समय से उन्होंने महजब-ए-इन्सानियत व मानवता धर्म का प्रचार अपने सत्संगों व पुस्तकों में प्रारंभ कर दिया था।

1958 में मैं उनके दर्शन करने होशियारपुर गया था। उस समय यह मानवता मन्दिर नहीं बना था। मेरे गुरू जी एक पंडित नारायणदास की टाल में बैठे थे। मैं गुरू जी के शरीर की सेवा कर रहा था तब गुरू जी बोले कि लालचन्द ! तेरे लिए यह सेवा नहीं है। मैंने पूछा महाराज जी मेरे लिए क्या सेवा है ? तब उन्होंने फरमाया कि यह जो सत्संग मैं दे रहा हूँ इसको ध्यान से सुनो और फिर इसका अनुभव खुद करो। अगर तुम्हारा अनुभव मेरे साथ मिले और तुम इसको ठीक समझो तो इस ज्ञान का बिना मुआवजा लिए प्रचार कर जाना। लोगों में धर्म के नाम पर बहुत भ्रम व शंका है। उस समय तो मैं आन्तरिक सहज योग के नशे में मस्त था, बात को ठीक से नहीं समझ सका। परन्तु जल्दी ही गुरू जी ने मेरे को सत्संग

देने की आज्ञा दी और जब मैंने उनकी बात को समझा (लगभग 1960 से) तब से मैं यह ज्ञान बाँटता चला आ रहा हूँ। सर्विस के दौरान जब भी दो माह की छुट्टी जाता तो गांव-गांव जाकर यह ज्ञान देना शुरू किया और अपनी योग्यतानुसार गुरू जी के ज्ञान का अपने क्षेत्र में प्रचार किया। उसके बाद 1975 में पेंशन आकर जहाँ-जहाँ गुरू जी जाते थे या उनके विश्वासी थे, वहाँ-वहाँ सत्संग देता रहा।

मानवता मन्दिर बनने पर पहली बैशाखी का उत्सव मनाने के लिए गुरू जी ने मुझे बुलाया। उस समय मुंशी भक्तराम, नारायण दास डोगरा, परदेशी और बहुत सज्जन आये हुए थे। सत्संग में गुरू जी ने हमें कहा था कि मानवता धर्म के केन्द्र की नींव डाल दी है, आगे मौज। जिससे जो कार्य लेना होगा, वह करायेगी। प्यारे पाठकों! यह उनका दिया हुआ संस्कार है जो 1960 से मैं राजस्थान, पंजाब, उत्तर प्रदेश, हरियाणा, दक्षिण भारत में हैदराबाद, हनमकुण्डा, अहेरी, मुम्बई व दूर-दूर तक सत्संग का कार्य करता आ रहा हूँ। जबसे डॉक्टर कमला मेरे सम्पर्क में आई है इसने मेरे सत्संगों का रिकॉर्ड करना शुरू कर दिया और साथ ही पुस्तक रूप में मेरा अपना अनुभव लिखने का आग्रह किया। पुस्तक लिखने की मेरी कोई इच्छा नहीं थी परन्तु डॉक्टर कमला के कई बार कहने पर टूटे-फूटे शब्दों में अपना अनुभव लिख दिया है। कोई दावा नहीं कि यही सच्चाई है। यह तो मेरा अपना अनुभव है।

❑❑❑

मानवता धर्म के प्रचार में सहयोग

यह मौज तो परम दयाल पंडित फ़कीरचन्द जी महाराज की थी। मानवता धर्म के प्रचार में लगभग सभी सम्प्रदायों के सज्जनों का योग है। जैसे पुस्तकों को समरी रूप डॉक्टर कमला ने दिया और उनको छपवाने में राधा स्वामी पंथ के परम संत ताराचन्द जी व परम संत कंवर सिंह जी के विश्वासी एडवोकेट जयमल सिंह जी का योगदान रहा इसके अतिरिक्त सनातनी, आर्यसमाजी व अन्य सभी सम्प्रदायों के बुद्धिमान् सज्जनों का सहयोग निरन्तर मिलता रहा है। पुस्तकें लगभग सभी सम्प्रदायों के लोगों ने पढ़ी हैं और दूसरों को पढ़ा रहे हैं। मैं यह समझता हूँ कि यह सभी का सहयोग मानवता के लिए है। एक मनुष्य इसका प्रचार नहीं कर सकता। यह तो पूरी मानवता के सज्जनों से ही पूरी मानव जाति तक सच्चाई फैल सकती है। मैं तो सभी सज्जनों से यह प्रार्थना करूंगा कि आप अभी तक छपी मेरी आठों पुस्तकों को पढ़ें। यदि आप ठीक समझें तो कृपया अपनी योग्यतानुसार इस मानवता धर्म का प्रचार करें। ताकि आज का मानव धर्म का रहस्य समझ कर अपने विचार व जीवन सुन्दर बना सके। क्योंकि यह सारा खेल विचारों का है।

ये पुस्तकें मानवता धर्म के प्रचार हेतु लगभग 50 हजार प्रतियाँ छपकर पूरे भारत में हिन्दी जानने वाले सज्जनों तक पहुँच रही है। विदेश में भी यू.के., कनेडा, अमेरिका, आस्ट्रेलिया तक हिन्दी जानने वाले सज्जन पढ़ रहे हैं। यह मानवता का सहयोग है किसी एक मनुष्य का काम नहीं है।

''हम मानव हैं भारत के, है मानवता धर्म हमारा।
करेंगे प्रचार इस धर्म का यह है संकल्प हमारा।
विश्व में फैलेगा यह मानवता मिशन हमारा।।''

प्यारे पाठकों! पहले हम मानव बनें। जैसे ऊपर नियम बताये हैं, हम उनका पालन करें। हम शरीर रूप से पुष्ट होकर किसी पूर्ण अनुभवी

सज्जन से सहज योग का साधन सीख लें। फिर उस साधन का अभ्यास करें। जब हमें अपने निज रूप का अनुभव हो जाये फिर मानवता का प्रचार करें। केवल थोथे प्रचार से कोई लाभ नहीं होगा। जो मनुष्य मन, वचन और कर्म से पवित्र होकर काम करता है, उसकी बात और विचारों का विशेष प्रभाव होता है। आज अपने देश में धर्म का कितना प्रचार देख रहे हैं ? कितने सत्संग हो रहे हैं ? दूरदर्शन के कई चैनल पूरे दिन सत्संग का प्रसारण कर रहे हैं। क्या आज मानवता सुखी है ? जिस देश में इतने महात्मा हों, वह तो स्वर्ग बन जाना चाहिए। धन्य होते यह महात्मा सज्जन। यदि मन, वचन और कर्म से पवित्र होकर मानवता के कल्याण के विचार से ही चैनल पर आये होते। जिस भाव या नीयत से हम काम करते हैं, वैसा ही होता है। मनुष्य का शरीर एक रेडियो स्टेशन है, जैसे विचार भाव से कार्य किया जाता है, परिणाम वैसा ही होता है। यह लोक विचारों का है। जैसा विचार व विश्वास होता है, वैसा ही होता है। As you sow so shall you reap.

मनुष्य को ज्ञान प्रदान करने के लिए हमारे ऋषि, मुनि, पीर, पैगम्बर व संत-महात्माओं की शैली भिन्न-भिन्न रही। वे कविता द्वारा, गायन द्वारा, सैन-बैन में तथा अन्य रोचक और भयानक ढ़ंग से लोगों को ज्ञान देते थे। उस समय और उन ज्ञान लेने वाले सज्जनों के लिए यह ठीक था। आज के विद्या-बुद्धि तथा विज्ञान के समय में मानव के लिए इतना समय नहीं है कि वह संकेत भाषा को समझ सके। अतः पूज्य महात्मा सज्जनों के लिए उचित है कि वे अपना अध्यात्म ज्ञान सीधे तरीके से मानवता के सामने रखें। अब इस ज्ञान को रहस्य में रखने का समय नहीं है। मैं मानवता धर्म के प्रचार में सभी प्रचारक सज्जनों का सहयोग चाहता हूँ कि वे अपने सत्संगों में अपना अनुभव साफ कहें ताकि आज जो मानव धर्म के नाम पर भटक रहे है, उनकी भटकन व भ्रम दूर हो सकें। अज्ञानता के कारण अपने सम्प्रदाय की श्रेष्ठता का भ्रम दूर करने का श्रम करें।

❑❑❑

धर्म का रहस्य

मेरे प्रति विश्वास रखने वाले प्रेमी जब ध्यान करते हैं तो भयवश या प्रेमवश जब उनका मन एकाग्र होता है तब मेरा रूप प्रकट होकर उनकी सहायता करता है। ये नई-नई चमत्कारी घटनाएँ 1962 से बहुत लोगों के साथ घटती आ रही है। इन घटनाओं के बारे में मैं अपने सत्संगों में बताता रहता हूँ कि मैं कहीं नहीं जाता हूँ और न मुझे इन घटनाओं के बारे में कुछ मालूम है। फिर यह क्या रहस्य है ?

रहस्य यह है कि मनुष्य चार तत्वों से मिल कर बना है - शरीर, मन, आत्मा और सुरत। यह सुरत अंश रूप में परमात्मा का ही रूप है। सब खेल इस सुरत का है। बाहर के संस्कार से मनुष्य राम, कृष्ण, मोहम्मद, ईसामसीह, कोई देवी-देवता, पीर-पैगम्बर आदि को विश्वासपूर्वक इष्ट मानता है। उसका मन जब एकाग्र होता है तब वह इष्ट प्रकट होकर उसके विश्वास के अनुसार उसकी मदद करता है। बाहर से कुछ नहीं आता-जाता है। यही धर्म का रहस्य है।

''जिसकी रही भावना जैसी, प्रभु मूर्त देखी तिन तैसी।''

संत तुलसीदास कहते हैं कि जिसकी जैसी भावना होती है, परमात्मा का रूप उसे वैसा ही दिखता है।

विश्वासी मेरे से प्रसाद बनवाकर ले जाते हैं। उनका मनचाहा काम हो जाता है। यह भी उनके विश्वास का खेल है। कुछ प्रसाद बनवाने वालों का काम नहीं भी होता है। क्योंकि वे देखा-देखी से प्रसाद तो बनवा लेते हैं परन्तु उनका विश्वास दृढ़ नहीं होता है। अत: उनका काम नहीं होता। यह सिद्धि किसी गुरू पीर में नहीं है, विश्वास करने वाले भक्त में है। परन्तु धर्म का प्रचार करने वाले गुरू, पीर, पंडित, पुरोहित यह भेद भक्त को नहीं बताते हैं। इसका कारण प्राचीन समय में

शायद भलाई में रहा हो। परन्तु आजकल सत्संगों में बहुत भीड़ होती है। लोग भ्रम, शंकाओं व अज्ञानता के कारण गुरूओं के आगे नाक रगड़ते हैं। अत: इन गुरूओं को बता देना चाहिए कि प्यारे! क्यों भटकता फिर रहा है ? परमात्मा तेरे साथ है। एक रूप जिसमें तेरा विश्वास है उसको पूर्ण मान कर अपने संकल्प शिव यानी सुन्दर-सुन्दर रख। तेरी ही आस व विश्वास का फल मिलेगा। बाहर से कुछ नहीं आता है। बाहर का गुरू जीव को विश्वास करा देता है व संस्कार देता है।

आज समय है धर्म के रहस्य को खोलने का, इससे साधक व योगी सज्जन सूक्ष्म लोकों में फँसे नहीं रहेंगे। सूक्ष्म लोकों के अनुभव में ध्यान योग से आनन्द आता है, ऋद्धि-सिद्धि व शक्ति भी मिलती है। यह रहस्य पूर्ण अनुभवी गुरू के सत्संग से ही खुलता है। यह मानव ही है जो संसार में सब तरह की सफलता प्राप्त करके, इसी जीवन में ज्ञान प्राप्त करके, मुक्त अवस्था में साक्षी भाव से परमात्मा की लीला देखकर अति आनन्द के जीवन का अनुभव कर सकता है। मनुष्य अज्ञान और तरह-तरह की भ्रम शंकाओं से दु:खी है। सौभाग्यशाली हो तो उसे किसी जीवित मुक्त पुरूष की संगत मिले और सब कार्य उसके सहज हो जायें। मेरे साथ यह घटना घटी हुई है।

''गुरू खोजो री जग में दुर्लभ रत्न यही''
''गुरू मिले तो भरम नसाहीं''

इस आशय का कबीर साहब का एक शब्द है :-

मैं वारि जाऊं सत्गुरू के, मेरा किया भरम सब दूर।
चन्द चढ़ा सब आलम देखें, मैं देखूं भरम दूर।।

हुआ प्रकाश आस गई दूजी, उगिया निर्मल नूर।
माया मोह तिमिर सब नाशा, पाया हाल हुजूर।।

विषय विकार लार हैं जेते, जार किया सब धूर।
पिया प्याला सुधि बुद्धि बिसरी, हो गया चकनाचूर।।

हुआ अमर मरे नाहिं कबहूँ, पाया जीवन नूर।
बंधन कटा छूटा अब जम से, किया दरस मंजूर।।

ममता गई भई उर समता, दुःख सुख डारा दूर।
समझे बने कहे नाहिं आवे, भयो आनन्द भरपूर।।
कहे कबीर सुनो भाई साधो, बजिया निर्मल तूर।।

सत्गुरू अपने सत्संग में जीव के सब भ्रम दूर कर के उसका मार्ग दर्शन करता है जिससे उसका मन एकाग्र हो जाता है और उसका माया, मोह, अज्ञान रूपी अन्धकार मिट जाता है तथा उसे मस्ती, खुशी व आनन्द मिलता है और अपने निज रूप का अनुभव हो जाता है। तब उसकी जीवित मुक्त अवस्था बन जाती है, सम स्थिति बन जाती है और जीवन-मरण अर्थात् आवागमन का भ्रम मिट जाता है।

मैं जिस मानवता धर्म की चर्चा कर रहा हूँ उसे यदि बुद्धिमान् सज्जन ध्यान से मेरे सत्संग में सुन ले व मेरी पुस्तकें पढ़ ले तो धर्म-कर्म का रहस्य उनकी समझ में आ सकता है और उनका काम बहुत ही सहज बन सकता है लेकिन यह काम उन्हीं का होगा जो इसके ग्राहक है या जिज्ञासु है। देखा-देखी या भेड़-चाल से यह काम बनने वाला नहीं है।

❑❑❑

योग साधन की विधि

पंतजलि योग शास्त्र में योग के सूत्र व विधियों की संख्या लगभग 112 है। गुरू मत और तंत्र के ग्रंथों में भी बहुत सी विधियां हैं। स्वयं मेरे साथ एक अलग तरह की योग-विधि घटित हुई थी। मैंने अपने सत्संगों व पुस्तकों में इसका वर्णन किया है। परन्तु आम साधक के साथ ऐसी घटना नहीं होती हैं। विधियाँ चाहे कितनी भी हों, योग का मतलब मन एकाग्र कर के चित्त वृत्ति का निरोध करना है।

''योगश्च चित्त वृत्ति निरोधः''

यह बात पूर्ण अनुभवी महापुरूष ही जानता है कि किस मनुष्य के लिए कौन-सी विधि ठीक रहेगी। क्योंकि सबकी प्रकृति भिन्न-भिन्न होती है।

जैसे भोजन पेट भर कर संतुष्ट होने की बात है। किसी ने सब्जी रोटी से पेट भरा, किसी ने खीर-हलवे से पेट भरा तो किसी ने मिठाई-भुजिया से पेट भरा। किसी ने दूध से तो किसी ने फलों से पेट भरा। यही बात मन को एकाग्र करने तथा समाधि लगाने की है। मैंने शुरू से ही सार-शब्द के अनुभव से सहज योग का अनुभव किया है और सहज समाधि में अधिक जीवन व्यतीत किया है। यह संतों का योग है और यह ही निज धाम का रास्ता है। इसके बहुत से नाम हैं। अर्थात् जिस महातत्व से यह सुरत निकल कर अपने ही विचारों, भावों से कर्म के जाल में फंसी हुई है, यह गुरू की कृपा से विधि सीखकर सुरत शब्द योग के सहारे से ही वापिस अपने निज घर जा सकती है। सनातन धर्म में इस सार शब्द को राम नाम, सतनाम या उल्टा नाम कहा है। लोग बाहर के नामों पर बातें करते हैं। यह विषय तो अनुभव का है। मेरे अनुभव में

बहुत ही सहज योग विधि आई है। कुछ करने की बात नहीं है। सहज ही अपने आप हो रहा है। कबीर साहब ने भी ऐसा ही कहा है :-

''सहजे ही धुन होत है, हरदम घट के माहिं।
सुरत शब्द मेला भया, मुँह की हाजत नाहिं।।''

इस योग साधन में अन्दर के प्रकाश, चाँद, सूरज, तारों की चर्चा आती है। इस विषय में मेरा अनुभव है कि जिस मनुष्य का कम उम्र में शारीरिक ब्रह्मचर्य गिर जाता है या बड़े होने पर भी मानसिक व शारीरिक ब्रह्मचर्य ठीक नहीं रहता है तो उसको प्रकाश के अनुभव होने में देर लगेगी और हो सकता न भी हो। यह अन्दर के प्रकाश का अनुभव ब्रह्मचर्य की शक्ति है। जिनको योग साधन करना हो, उनके लिए ब्रह्मचर्य का पालन बहुत आवश्यक है। यदि योग-साधक विषय-भोग करेगा तो उसके दिमाग का संतुलन बिगड़ सकता है। चिड़-चिड़ा स्वभाव, डर, भय और कई बीमारियाँ उसे हो सकती हैं। केवल संतान-उत्पत्ति के लिए गृहस्थी भोग कर सकते हैं और उतने समय के लिए वो योग अभ्यास न करें। शेष इस विषय में अपने आध्यात्मिक गुरू से सलाह कर लेनी चाहिए।

इस मानवता धर्म या महजब-ए-इन्सानियत या Religion of Humanity की शिक्षा या तत्त्व ज्ञान के लिए आज के मनुष्य को इस लोक का जीवन सुख-शांति से जीने तथा इस शरीर के त्यागने के बाद शांति प्राप्त करने वाले ज्ञान को जानने की जरूरत है। आज दुनिया में मनुष्य सुखी जीवन नहीं जी रहा है। मनुष्य को अपने असली रूप का ज्ञान नहीं है। वह नहीं जानता है कि वह कौन है, कहाँ से आया है व कहाँ जायेगा ? मानवता मिशन यह ज्ञान देगा कि दुनिया का काम करते हुए तू अपने रूप को जान। (Self realization is all and everything) योग साधन जो मन का निरोध करने के लिए किया जाता है, इसकी बहुत

सी विधियाँ योगियों ने अपने अनुभव के अनुसार बताई हैं। मैंने आपकी सेवा में अपना अनुभव बताया है। यह मेरा ही अनुभव नहीं हैं, आज तक जितने सन्त महात्मा व तत्व ज्ञान के अनुभवी हुए हैं, सबने अन्दर के सार-शब्द को ही मंजिल पर पहुँचने का नेशनल हाइवे बताया है। उनके बताने की भाषा और वर्णन शैली अलग-अलग हो सकती है।

''उत्तमा सहजावस्था, मध्यमा ध्यान धारणा।
अधमा तीर्थयात्रा मूर्तिपूजा च अधमाधमा।।''

मेरे भाग्य में शुरू से ही यह उत्तमा सहजावस्था आई है। इसमें कुछ करने की या यत्न की बात नहीं है। सहज सब कार्य करते हुए अनुभव अपने आप होता रहता है। मध्यमा जो ध्यान धारणा है इसे सभी योगी साधक आसन लगाकर मन से खींचातानी करते रहते हैं। अधमा-तीर्थ स्थानों या गुरू-पीरों के आश्रमों में जाकर इच्छापूर्ति करना है। बिना सत्संग के मूर्ति पूजा सबसे अधम है। इसका मतलब यह नहीं है कि दूसरे योगी व साधक सज्जन जो अपने मन का निरोध करते हैं वे गलत हैं। मैंने अपने अनुभव का ब्यान किया है। गुरू महाराज ने मुझे जुबानी यह विधि नहीं बताई थी। जब समाधि में बैठे तब सहज ही उनकी Radiation यानी विकिरण धारा से यह सब सहज ही हो गया था। इस सहजावस्था के बारे में मैंने शब्द पहले भी इसी पुस्तक के 'ज्ञान-योग' शीर्षक में लिखे हैं। आप एक बार देख लें। ये कई शब्द ज्ञान योग के बारे में लिखे हैं। यह मानवता धर्म में अध्यात्म ज्ञान की एक सहज शैली है और मनुष्य के लिए जीवन में जीवित मुक्त अवस्था की रहनी है। आप समझ गए होंगे कि हम महजब-ए-इंसानियत को अपना दीन-ईमान या मानवता धर्म बनायें। तब ही हम आसानी से महजब-ए-रूहानियत तक इसी जीवन में घर-गृहस्थी में रहते हुए, दुनिया के सब काम करते हुए

सहज में मंजिल पर पहुँच सकते हैं। जैसे कहा गया है :-

''जाको दर्शन इत है, वा को दर्शन उत।
जा को दर्शन इत नहीं, वा को इत न उत।।''

पहले हम अपना इस लोक का जीवन अच्छा बनाये फिर हमारा ईमान अर्थात् धर्म बन जायेगा। हम अलग-अलग सम्प्रदायों में बंटे हुए हैं और पुराने समय की बातों को दोहराना ही धर्म-कर्म समझते हैं। यह विषय साधन का क्रियात्मक रूप अर्थात् अमल करने का है। हम पहले इंसानियत पर विचार करें, उसे समझें। इसके बाद ही हम रूहानियत यानी आत्मा-परमात्मा का अनुभव कर सकते हैं। परमात्मा कहीं दूर नहीं हैं, अंश रूप में मनुष्य के अन्दर सुरत रूप में है।

''अब आदमी हमारी नज़र में कुछ और है।
जबसे सुना है यार लिबासे बसर में है।''

''तेरा साईं तुझमें, ज्यों पुहुपन में बास।
कस्तूरी का मृग, ज्यों फिर-फिर ढूंढे घास।।''

यह बात आपको मानवता धर्म के ज्ञान से बहुत सहज में अनुभव में आ जायेगी। कहना भी क्या है ? अपने आप को जानने का ज्ञान प्राप्त करना है। मनुष्य ने सब कुछ जान लिया मगर अपना ज्ञान प्राप्त नहीं किया कि वह क्या है ? यह अज्ञान ही आज के बुद्धिमान् व विद्वान् मानव को दु:खी कर रहा है। यह मन योग-विधि व योग साधन से सहज ही वश में हो जाता है और फिर सहज में ही अपने निज रूप का ज्ञान हासिल किया जा सकता है। ज्ञान अध्यात्म की सबसे ऊँची मंजिल है।

❑❑❑

सतगुरू जीव को मुक्त करना चाहते हैं

जीव इस लोक में काल के चक्कर में फँसा है। वह मुक्त होना ही नहीं चाहता है। जीव को होश नहीं है। जैसे कबीर साहब का शब्द है :-

ऐसी दुनिया हुई रे दीवानी, भक्ति भाव नाहिं बूझे जी।
कोई आवे बेटा माँगे, यही गुसाईं दीजे जी।।
कोई करावे विवाह-सगाई, भेंट रूपया दीजे जी।
कोई आवे दु:ख का मारा, हम पर कृपा कीजे जी।।
साचे का कोई गाहक नाहिं, झूठा जग पतिजे जी।
कहत कबीर सुनो भाई साधो, अंधों का क्या कीजे जी।।

भाव यह है कि कोई गुरू यदि जीव को अपने सत्संग में सच्चाई बताना भी चाहे तो जीव सुनने को तैयार नहीं है। सतगुरू तो जीव को सदा सुखी रहने वाला ज्ञान देना चाहता है। परन्तु जीव इस बात को सुनता ही नहीं है। यह मेरा निजी अनुभव है। यदि मेरे सत्संग कोई ध्यान से सुनकर उन पर विचार करके अमल करें तो दु:ख की कोई बात नहीं रह सकती है क्योंकि उसको ज्ञान हो जाएगा और दु:ख व सुख से वह ऊपर चला जाएगा। यह दु:ख-सुख अज्ञान की बातें हैं और अपने ही शुभ-अशुभ कर्मों का फल है। जो बात हमारे मन के अनुकूल है वह सुख और जो प्रतिकूल है वह दु:ख कहलाती है। यह हमारे ही विचारों का फल है। दिन भर हमारे मन में विचार-धारा चलती रहती है। घटिया विचार (Negative thinking) दु:ख का व अच्छे विचार (Positive thinking) सुख का परिणाम हैं। यह लोक संकल्प का है। जैसे जिसके विचार व संकल्प है वैसा ही उसका जीवन बनता जाता है। सतगुरू इस विषय का अनुभवी होता है। मन पर काबू करने की विधि बताकर शिव संकल्प का भेद समझा देता है। दुनिया में सतगुरू कम हैं। कबीर साहब का कथन है :-

''ऐसी अंधी दुनिया हैं, जाने न संत असंत।
जा के संग दस बीस हैं, ता को नाम महंत।।''
''सिंहो के लेंहडे नहीं, हंसो की नहीं पात।
लालों की नहीं बोरिया, साधु न चले जमात।''
''साध सिंह का एक मत, जीवित ही को खाए।
भावहीन मृतक दशा, ताके निकट न जाए।।''

आज हम चारों ओर कितना सत्संग का प्रचार देख रहे हैं। यह सन्त महात्मा धन्य हैं। यदि ये मन, वचन व कर्म से आज के अशांत मानव को सुख शांति देने का कार्य सत्संग के माध्यम से कर रहे हैं तब तो कुछ कहने की बात ही नहीं है, नहीं तो वे अपने आपको व मानवता को धोखा दे रहे हैं। मैं अपने आप से यह प्रश्न कर रहा हूँ कि भाई! इस 83 साल की उम्र में तू क्यों यह सत्संग का जाल फैला कर भागा फिरता है? क्या तेरे सत्संगों और पुस्तकों से कुछ हो जायेगा ? प्यारे पाठको। न तो मेरी इच्छा किसी को शिष्य बनाने की है और न किसी से एक रूपया अपनी निज की आवश्यकता के लिए लेने की है। फिर यह भाग-दौड़ क्यों ?

सज्जनों ! रहस्य यह है कि मैं ही नहीं जितने मनुष्य आप देख रहे हैं, क्या बड़ा क्या छोटा, सब ही अपने-2 कर्मों या संस्कारों के अनुसार जो भी भाग-दौड़ या अच्छे-बुरे कर्म कर रहे हैं, सब मजबूर हैं। मैं भी उन भाईयों में से एक हूँ जो पूरी मनुष्य जाति को एक मानवता धर्म का अनुयायी बना कर आपस में मिल-जुलकर यह जीवन यहाँ सुख-शांति से जीने और शरीर त्यागने पर परम शांति प्राप्त कर सकने में सफल बनाने का प्रयास कर रहा हूँ। यह ज्ञान देने के लिए सत्संग कराना और पुस्तकें लिख कर यह काम करने को मैं मजबूर हूँ और न चाहते हुए भी घसीटा जा रहा हूँ।

प्यारे पाठकों ! आप चारों ओर लोगों को काम करते देख रहे हो। यह सभी की हालत है जो मेरी आज 83 साल की उम्र में आप देख रहे हैं। कोई गुरू-पीर दया करके लोगों को ज्ञान देने को मजबूर है तो

कोई गुरू का स्वांग बनाकर भोले-भाले लोगों से धन लूटने को मजबूर है। कोई डॉक्टर रोगी को निरोग करने के विचार से काम करता है तो कोई डॉक्टर का लिबास पहन कर रोगी की मजबूरी का फायदा उठाने को मजबूर है। बाकी बड़े आदमियों, राजनेताओं की कहानियाँ आप रोज अखबारों में पढ़ते ही हैं। इनके बस की बात नहीं है। यह अपने संस्कारों के अनुसार ऐसा करने को मजबूर हैं। धर्म का ज्ञान देने वाले पंडित-पुरोहितों, गुरू-पीरों, मुनि, शंकराचार्यों की मजबूरी भी आप देख रहे हैं। ये घटिया काम करने को मानवीय कमजोरी के कारणवश ऐसा करने को विवश है। मैंने इस खेल में क्या समझा हैं ? आप गीता ज्ञान तो जानते ही हैं। गीता में भगवान् श्री कृष्ण ने अर्जुन को साक्षी भाव से परमात्मा की लीला देखने को कहा। यहाँ स्थूल, ऊपर सूक्ष्म व कारण लोकों में जो कुछ हो रहा है, सब परमात्मा तत्व का सुन्दर खेल या लीला है। प्यारे पाठको! मैंने अपनी इस उम्र में भागदौड़ की मजबूरी के साथ आपको सबकी मजबूरी बता दी है। ये सब महानुभाव दया व क्षमा के पात्र हैं। आप भी इनके अवगुण न देखकर, मजबूरी समझ कर माफ कर देना ताकि आपको भी शांति मिले। मैंने आपकी सेवा में संस्कार या कर्म प्रभाव की व्याख्या की है। सब अपने कर्मों को भोगने को मजबूर हैं :-

''जहाँ दया तहाँ धर्म है, जहाँ लोभ तहाँ पाप।
जहाँ क्रोध तहाँ काल है, जहाँ क्षमा तहाँ आप।।''

भाव यह है कि जब मनुष्य के मन में दया का भाव आता है तो वह धर्म का रूप है। जब लोभ होता है तब वह दूसरे की हानि या दु:ख भूल जाता है, वह पाप है। जब क्रोध आता है तो वह किसी को मार भी सकता है। मगर जब क्षमा का भाव होता है तब वह परमात्मा का ही गुण होता है।

''जब तू होता है किसी शख्स पर अंकुसनुमा।
अंगुलियाँ तीन झुकी रहती हैं तेरी जानम।।''

भाव यह है कि जब हम किसी के ऐब बताने के लिए उसकी

तरफ अंगुली उठाते हैं, तब एक अंगुली उसकी तरफ होती है और तीन अंगुलियां हमारी तरफ होती है। अर्थात् हम में उससे तीन गुणा ऐब (अवगुण) है। आगे कहा गया है :-

''जब न थी अपने हाल की खबर।
रहे देखते औरों के एबो-हुनर।।
जब गई अपने गुनाहों पर नज़र।
तो निगाहों में कोई बुरा न रहा।।''

योग साधन करा कर सतगुरू जीव को अपने सत्संग में यह ज्ञान देता है कि कोई भी बुरा नहीं है। सभी परमात्मा का रूप हैं परन्तु इनके संस्कार या कर्म ऐसे हैं कि जो यह कर रहे हैं, करने को बाध्य हैं। यहाँ पर सब सुरतें लीला कर रही हैं। जैसे राम ने अपने अवतार रूप में जीवन-लीला को खेला था वैसे ही सभी सुरतें यहां लीलारत हैं। इस लीला का साक्षी भाव से वही मनुष्य आनन्द ले सकता है जिसको गुरू कृपा से ज्ञान हो जाता है। इसी का नाम जीवित मुक्त है। ऐसा जीवित मुक्त मनुष्य महात्मा या साधु संत का कोई वेश नहीं बनायेगा। यह स्वांग तो वह तब तक ही बनायेगा जब तक उसे ज्ञान नहीं होता और जब तक ज्ञान नहीं होगा तब तक मनुष्य साधु, महात्मा, गुरू, मुनि, शंकराचार्य आदि बनकर लीला करता रहता है। यह सब खेल ज्ञान के लिए किये जाते हैं।

अब आप समझ गए होंगे कि सतगुरू कौन है और वह क्या करता है ?

❑❑❑

सतगुरू जीव को समझ, विवेक, व अनुभव की विधि बताकर ज्ञान देता है

सतगुरू जीव की प्रकृति के अनुसार समझ, विवेक व अनुभव की विधि बताकर ज्ञान देता है। इस ज्ञान से मनुष्य को अपने निज रूप का ज्ञान होता है। यह जहाँ कहीं से भी मिलता है, ले लेना चाहिए। जो यह ज्ञान देता है वही सतगुरू है। यह ज्ञान नहीं मिला तो समझो अभी तक सतगुरू नहीं मिला है। अत: सतगुरू की तलाश करो। सतगुरू के सम्बन्ध में शब्द नीचे पढ़ लें कि सतगुरू क्या कह रहा है -

साधो गुरू का रूप लखाऊँ।

जो कोई आवे मेरी सभा में, गुरू का रूप लखाऊँ।।
सत रज तम की हद से बाहर, गुरू मूरति दर्शाऊँ।
निर्गुण सगुण देह नाहिं जाके, अद्‌भुत भेद बताऊँ।।
हाड़ माँस नाड़ी नाहिं जाके, वा के रूप ननाऊँ।
सब का सब में सबसे न्यारा, मर्म विचित्र जताऊँ।।
सतगुरू चरण शरण बलिहारी, पल-पल गुरू गुण गाऊँ।।

सतगुरू यह चेतावनी दे रहा है कि जो कोई मेरी सभा (सत्संग) में आयेगा उसको गुरू का वह अद्‌भुत रूप लखा दूंगा, जिसके ध्यान से इसी जीवन में ही वह गुरू के रूप के सहारे से अपने निज घर पहुँच सकता हैं व परम आनन्द और परम शांति का अनुभव कर सकता हैं।

सतगुरू जो कुछ अपने विश्वासी शिष्य को दे सकता है, वह मैंने निज अनुभव के आधार पर बता दिया है। यह तब ही हो सकता है जब भक्त के मन में इस ज्ञान को प्राप्त करने की सच्ची तड़फ, लगन व चाह हो। यदि भक्त के मन में यह तड़फ न हो तो सतगुरू उसको कुछ नहीं दे सकता है। जैसे कहा गया है :-

''गुरू अकेला क्या करे जो शिष्य में चूक।
नौ नेजा पानी चढ़े तब ही ना भीजे कोर।।''
''गुरू बेचारा क्या करे, जो शिष्य में चूक।
मारी थी लागी नहीं, बंक नाल में फूंक।।''

मतलब यह है कि शिष्य यदि नरम मन का व विश्वासी नहीं है तो गुरू उस पर अपना कोई प्रभाव नहीं डाल सकता है। जैसे कठोर पत्थर पर खूब पानी चढ़ जाये तब भी वह पत्थर गलता नहीं है। ऐसे ही यदि शिष्य नम्र व भावुक नहीं हो तो गुरू उसको ज्ञान नहीं दे सकता है।

कितने बच्चे पढ़ने जाते हैं, परन्तु उच्च शिक्षा केवल अधिकारी ही पाते हैं। यही बात तत्व ज्ञान के विषय में है। आप बात समझ गये होंगे कि सतगुरू जिसे बाहर से हमने मनुष्य रूप में अपना इष्ट माना है, वह केवल अधिकारी को ही ज्ञान दे सकता है। हाँ, कुछ जिज्ञासुओं को जल्दी और कुछ को ज्ञान पाने में देर लग सकती है। यह उनकी समझ, विवेक, अनुभव व योग्यता की बात है। फिर यह तत्व ज्ञान या अध्यात्म विषय बहुत ऊँची बात है परन्तु सब लोग इसके अधिकारी नहीं है। जो संस्कार वे प्रारब्ध कर्म के लेकर आये हैं उसे भोगने को मजबूर है। इस कर्म गति का खेल साधारण मनुष्य ही नहीं वरन साधु-संत, पीर-पैगम्बर सब भोग रहे हैं। एक शब्द पढ़े :-

''सब भोगें बारम्बार, अवश्य फल कर्म किये का।
यह सोच समझ चित्तधार, मर्म जग जन्म जिये का।।

सुर नर देवी देव महर्षि, और ब्रह्म अवतारा।
अशुभ कर्म के फल से इनको, मिले नहीं छुटकारा।।

एक जो कहिये राम महाप्रभु पुरूषोत्तम मर्यादा।
गुप्त घाट सरजू जल डूबे, रामायण सम्वादा।।

दूजे कहिये कृष्ण विवेकी, सोलह कला के पूरे।
यदु कुल नाश भील की गांसी, भय मान मद चूरे।।

तीजे युधिष्ठर धर्मराज की, अकथ अपार कहानी।
भाई भान्जा संग गले हिम, सो सब कोई जानी।।

चौथे वशिष्ठ महा मुनि ज्ञानी, देखा कुल का नाशा।
विश्वामित्र के हाथ पलट गया, ज्ञान योग का पासा।।

पंचम दशरथ अवध नरेशा, श्रवण ऋषि को मारा।
पुत्र वियोग प्राण को त्यागा, मिला न राम सहारा।।

छठे इन्द्र की करनी समझो, श्राप बृहस्पति दीना।
भग मय देवराज की काया, कर्म का फल यह लीना।।

चन्द्र कलंकित काम वेग से, जाने सब संसारा।
कर्म अटल है महाबली है, कोई-कोई करे विचारा।।

रावण बाली भरत जड़ ज्ञानी, ऋषि के सुत दुर्वासा।
कर्म किया तैसा फल पाया, अन्त में भया उदासा।।

सुन प्रसंग चित्त अपना सोधो, सोधो मन कर्म वानी।
शब्द योग कर जन्म बनाओ, राधास्वामी की सहदानी।।

इस ऊपर के शब्द में आपने पढ़ लिया है कि हर मनुष्य चाहे छोटा हो या बड़ा हो, अपने-अपने संस्कारों व कर्मों के अनुसार अच्छा या बुरा कार्य करने को विवश है। सतगुरू की संगत मिले तो उसको सत्संग में इस संकल्प तथा विचार का ज्ञान हो और प्रवृति व निवृति मार्ग के

जीवन को सुन्दर बनाने का तरीका पता चले तब ही उसका जीवन सुन्दर बन सकता है और अन्त में अपना निज का ज्ञान प्राप्त करके वह परम आनन्द व परम शांति को प्राप्त हो सकता है।

पहला प्रश्न मैं अपने आप से ही करता हूँ कि तू खुद ही बता तेरे को क्या मिला ? प्यारे पाठकों ! मैंने प्रवृत्ति मार्ग यानी इस संसार का जीवन अति आनन्द, हंसी-खुशी में रहते हुए जिया है। किसी बात या चीज का जीवन में अभाव नहीं रहा। अधिकारी पद पर रहा हूँ। युद्धों में सिग्नल ऑफिसर के पद पर काम किया है। सेना में युद्ध सम्बन्धी व शस्त्र स्कूलों में अधिकारियों को पढ़ाता रहा हूँ। सब क्षेत्रों में बहुत खुशी, उमंग, उत्साह से काम करते हुए सेवा की है। ऐसा नहीं है कि मन्दिर, मठ, गुरूद्वारों में बैठकर नाम जपा है। चलते-फिरते सहज योगी रहा हूँ। पैंशन आने के बाद 6 वर्ष तक सेना (थल व जल) में भर्ती अधिकारी रहा हूँ। पंजाब, आसाम और हरियाणा में सेवा की है। इस सेवाकाल में हंसते-खेलते अपने सीनियर, बराबर वाले व जूनियर अफसरों के साथ घुलमिल कर काम किया है। खेल की तरह सेवा की है। आप समझ गए होंगे कि इतना काम करते हुए मन को समस्थिति में रखते हुए अर्थात् मुक्त अवस्था में जीवन जीते हुए ज्ञान-योग को चरितार्थ किया है। मेरी दृष्टि में निज का ज्ञान ही मुख्य है।

दूसरी बात रही निवृत्ति मार्ग की अर्थात् शरीर त्यागने के बाद की स्थिति। वैसे तो थोड़ी देर के लिए एक-दो बार का ऐसा अनुभव है। परन्तु पुनः उत्थान हो गया था। यह योग-साधन की बात है। वैसे तो हर मनुष्य ही गहरी नींद में जाता है। उस समय उसकी सुरत कुछ समय के लिए अपने घर में सहज चली जाती है और फिर प्राकृतिक रूप से होश में आ जाती है। परन्तु पूरी तरह से शरीर त्यागकर कहाँ जाऊंगा? कह नहीं सकता हूँ। यदि अन्त समय में जिस अनुभव में रहता हूँ यदि यही रहा तो मेरी सुरत शब्द रूपी परमात्मा के सागर में विलीन हो जायेगी। यह अनुमान है, अनुभव नहीं। मेरे दोनों हाथों में लड्डू हैं। यदि यहाँ वापिस आया तो बहुत खुशी से मनुष्य जाति को ज्ञान देकर सुख-शांति

से जीवन जीना बताऊंगा। यह लोक मुझे स्वर्ग जैसा लगता है। मैंने पूरा जीवन ही हंसते-खेलते, प्रेम भाव से, उमंग व उत्साह से जिया है और अब 83 वर्ष का हो गया हूँ। रोज का जीवन सुखमय व आनन्दमय है।

''सदा दीवाली साध के, आठों पहर आनन्द।''

अर्थात् ज्ञान-योग में जीवन जी रहा हूँ।

''जिधर देखता हूँ, ऊधर तू ही तू है।
हर शै में जलवा तेरा हूबहू है।।''

योग कुछ ऐसा है :-

''सहजे ही धुन होत है, हर दम घट के माहिं।
सुरत शब्द मेला भया, मुँह की हाजत नाहिं।।''

जीवन की हालत के बारे में पीछे कबीर साहब का शब्द दिया है, वह पढ़ लें। जीवन में बेफ़िक्री व बेगमी है।

''हमन है इश्क मस्ताना, हमन को होशियारी क्या ?
रहें आजाद या जग में, हमन दुनिया से यारी क्या ??''

प्यारे सज्जनों! अनुभव यह ही बताता है कि जो यहाँ आये हैं, सभी अपने कर्मों का खेल खेल कर गये है।

''आये हैं वे जायेंगे, राजा रंग फ़कीर।
एक सिंहासन चढ़ चले, एक बंधे जात जंजीर।।''
''लायी हयात ले चली कजा चले।
न अपनी खुशी आये न अपनी खुशी चले।।''

आपकी सेवा में मैंने संक्षेप में अपने अध्यात्म ज्ञान को टूटे-फूटे शब्दों में बयान किया है। मेरा कोई दावा नहीं कि यह ही सच्चाई है। यह मेरा निज का अनुभव है।

❑❑❑

सच्चाई क्या है ?

सच्चाई न तो लिखी जा सकती है और न बताई जा सकती है। जो लिखी और बताई जा सकती है वह सच्चाई नहीं हो सकती। यदि यही सच्चाई होती तो न जाने गीता, रामायण, गुरूग्रंथ साहिब, कुरान, बाईबल और अन्य कितने सारे ग्रन्थ धर्म कर्म की बातों से भरे पड़े है और सभी धर्म व सम्प्रदायों के सज्जन इन शास्त्रों को पढ़ते हैं। सत्संग भी बहुत हो रहे हैं। पूज्य महात्मा बहुत कुछ बता रहे हैं। फिर भी आज का मानव कोरा व अशांत है। सच्चाई से कोसों दूर है। यदि यह सच्चाई लिखने में ही आ जाती तो पढ़ने वाले तो सुखी होते। मेरा भाव यह है कि शास्त्र पढ़ने से भ्रम तो दूर हो सकते हैं, बशर्ते इन्हें लिखने वाले महात्माओं का मन, वचन और कर्म पवित्र रहा हो और वे स्वयं भ्रम, शंका से मुक्त हो। तब ही इन्हें पढ़ने वाला लाभान्वित हो सकता है। बात आज के पूज्य महात्मा सज्जनों की है जो सत्संगों के माध्यम से ज्ञान दे रहे हैं। यदि वे जो कहते हैं और उनका मन, वचन व कर्म पवित्र है तो सत्संग सुनने वालों पर इनका प्रभाव होता है और उनके भ्रम शंका दूर होते हैं। परन्तु यदि खुद ही इन पूज्य महात्माओं का मन, वचन व कर्म पवित्र नहीं है तो इनसे क्या आशा की जा सकती है ? यह जो मैंने लिखा है इसे आप स्वयं सत्संगीजन इन पूज्य महात्माओं को देखकर, जांच कर सोचो व समझो तो बात समझ में आ जायेगी।

अब प्रश्न यह है कि सच्चाई कैसे मालूम हो ? इस सन्दर्भ में जो अनुभव मेरा है वह आपकी सेवा में लिखता हूँ। जिस सज्जन ने खुद सच्चाई को अनुभव कर लिया हो उसकी संगत कर के, सेवा करके हम सच्चाई का खुद ही अनुभव कर सकते हैं। यह सिर्फ पढ़ने, सुनने की बात नहीं है, अनुभव का विषय है। जिसने सच्चाई का अनुभव किया हुआ है, उस सज्जन को महात्माओं ने बहुत से नामों से विभूषित किया है जैसे पूर्ण अनुभवी (Master of Spiritual Psychology), वीतराग पुरूष, पूर्ण काम योगी, जीवित मुक्त, परम संत, वक्त गुरू तथा और भी बहुत

से नाम दिये गए हैं। आज के मनुष्य को हर बात का प्रमाण चाहिए। मेरे पास इसका प्रमाण हैं मेरे गुरू पंडित फकीरचन्द जी। जब मैं उनके दर्शन करने गया था तो पहले ही दिन मुझे राम नाम, सत नाम, राधास्वामी नाम का अनुभव हो गया था। इस नाम को महात्माओं ने अपनी-अपनी शैली में अनेक नामों से पुकारा है। यह पूर्ण अनुभवी की पहचान है कि जो भी इच्छा लेकर उसके पास जाता है, उसकी Radiation (विकिरण धारा) के प्रभाव से सहज ही इच्छा पूरी हो जाती है। बात स्पष्ट है कि सच्चाई पूर्ण अनुभवी की संगत से ही पता चलती है न कि पढ़ने व सुनने से। यह सच्चाई तो केवल अनुभव से ही जानी जा सकती है। जिसको यह सच्चाई जाननी है, पूर्ण अनुभवी की संगत में बैठकर स्वयं जान लें। यह बात तो है अनुभव की और दिये जा रहे हैं सत्संग तथा लिखी जा रही है पुस्तकें। बहुत से अलंकारों के प्रयोग से लिखी पुस्तकों से यह अनुभव नहीं हो सकता है क्योंकि पुस्तकों में राजे खुदा नहीं है। कबीर साहब ने एक शब्द में कहा है :-

कहाँ कहे अन कही भली है।
वहाँ तो वेद शास्त्र कछु नाहिं।।

वहाँ अकथ यहां कथा चली है।
कहें कबीर सुनो भाई साधो।
सोहम् हंसा सरब मयी है।।

यह केवल अनुभव का विषय है। मनुष्य की आत्मा (सुरत) परमात्मा का सहज ही अनुभव यानी बोध करती रहती है। यहाँ कोई नजारा या दृश्य नहीं होता न कुछ कहा सुनी होती है। पूर्ण शान्ति बनी रहती है। सुरत सार शब्द का अनुभव करती रहती है जो बताने या लिखने में नहीं आता है। केवल अनुभव की बात है।

❑❑❑

श्रेय और प्रेय मार्ग

अध्यात्म व तत्त्व ज्ञान को अनुभव करने के दो मार्ग मुख्य है। एक है श्रेय मार्ग जिसको श्रेष्ठ या उत्तम मार्ग भी कहा जा सकता है जो पहले थोड़ा कठिन होता है परन्तु कुछ समय अभ्यास के बाद बहुत आसान, आनन्दमय व सहज होता जाता है। भारत में इस मार्ग के बहुत शास्त्र लिखे हुए हैं जैसे गीता, रामायण, ग्रन्थ साहब व अन्य इसी प्रकार के बहुत से गुरू मत के शास्त्र है।

दूसरा प्रेय मार्ग है। इसे तन्त्र का मार्ग कहा जा सकता है। इस तन में ही मन और आत्मा तत्व रहते हैं। इसको मन मत कहते हैं। इसका अर्थ है पहले छोटे-2 सूत्रों से प्रयोग करके देखना। यदि उस प्रयोग का परिणाम ठीक निकले तब आगे बढ़ना, नहीं तो दूसरा सूत्र प्रयोग करके देखना और जिस सूत्र का परिणाम ठीक निकले उसका प्रयोग करना। जैसे डॉक्टर रोगी को देखकर, जांचकर उसे दो या तीन दिन की दवाई देता है और उसका परिणाम देखता है यदि दवाई लग जाती है तो उसी दवाई का पुनः प्रयोग करता है नहीं तो दवा बदल देता है। इसी प्रकार तान्त्रिक अपनी साधना में प्रयोग बदल-बदल कर देखता है। इस प्रेय मार्ग के मुख्य यह साधन या अभ्यास हैं :- 1. मोहन मन्त्र, 2. मारण मन्त्र, 3. उच्चाटन मन्त्र, 4. मैसेरिजम, 5. हिपनोटाइज, 6. टेलीपैथी। इनका अर्थ पहले इन्द्रिय सम्बन्धी इच्छाओं की पूर्ति है। इस मार्ग में बहुत सी सिद्धियां मिलती है और साधक इन सिद्धियों के जाल में फंस जाता है और आत्म तत्व व परमात्मा तक पहुंचने से पहले ही इन सिद्धियों के चक्र में फंस कर अपनी जीवन लीला को समाप्त कर जाता है।

भारत के सभी देशों में आप श्रेय व प्रेय मार्ग के साधकों को देखते हैं। दूसरे देशों की तो बात ही क्या है ? भारत में आज अध्यात्म ज्ञान को जानने व अनुभव करने की जिन विधियों को आदि काल में ऋषि-मुनियों, अवतारों, नाथों व सन्तों ने प्रयोग करके अपने अनुभव के आधार पर उस समय के अनुसार लिखा था, आज भी उन्हीं की लकीर

पीटी जा रही है जिसका कोई विशेष प्रभाव लोगों पर नहीं पड़ता है।

इस समय में सन्तों ने अध्यात्म ज्ञान की बहुत सहज विधि का प्रयोग करके मनुष्य को अति आसान और सीधा मार्ग प्रदर्शित किया है जिसमें यह बताया है कि मनुष्य इसी ही जीवन में अपने प्रारब्ध कर्म को भोगता हुआ, अपने जीवन निर्वाह के लिए जो काम कर रहा है, उसे करता हुआ आत्म तत्व का अनुभव कर सकता है। परन्तु आज जब हम चारों तरफ साधु सन्तों का हाल देखते हैं तो लगता है कि मनुष्य इस तत्व ज्ञान का अनुभव करने के लिए उन्हीं पुरानी शरीर का स्वांग बनाने वाली वेश-भूषा, तिलक, केश, दाढ़ी इत्यादि विधि की नकल कर रहा है और जब इन साधु, सन्त, पण्डित, पुरोहित, मुल्ला, नवी, वलियों के ज्ञान को देखते हैं तो ये लोग इस आत्म तत्व ज्ञान से बहुत दूर प्रतीत होते हैं जबकि यह सब कुछ ज्ञान इनके अन्दर है। जैसे गुरू नानक देव जी ने कहा है :

घट में है सूझत नहीं, लानत ऐसी जिन्द।
नानक इस संसार को, हुआ मोतिया बिन्द।।

अधिक क्या लिखूं ? आप भारत के साधु सन्तों की वेशभूषा व योग साधन की विधियां देखना चाहें तो किसी कुम्भ के अवसर पर देखना।

मैंने सन् 1960 से गुरू आज्ञा से अध्यात्म ज्ञान का अनुभव सत्संगों में बताना शुरू किया था। मैंने अधिकतर प्रवृत्ति मार्ग पर सत्संग दिए हैं। प्रवृत्ति मार्ग का अर्थ है इस जीवन को सुखमय बनाकर, खुशी, उमंग, प्रेम-प्यार से हंसते-खेलते जीना। जहां भी हम काम कर रहे हैं, जो भी काम कर रहे हैं, उसे प्रसन्नता से करें। मनुष्य का दुःख क्या है और उसका इलाज क्या है ? मैंने यह अनुभव किया है कि मनुष्य ने आज अपनी समझ और विद्या, बुद्धि से संसार के हर क्षेत्र में ज्ञान प्राप्त किया है और विज्ञान में बहुत उन्नति की है परन्तु मनुष्य अपने खुद को नहीं जानता है। इस विषय में वह कोरा है। यदि मनुष्य अपने आपको जान लें यानी स्वयं का अनुभव कर लें तो इसके सब दुःख दूर हो सकते हैं। मैं स्वयं

इसका प्रमाण हूँ। इस ज्ञान-प्राप्ति के बाद मुझे जीवन में किसी प्रकार के दु:ख व तकलीफ का सामना नहीं करना पड़ा।

इस आत्मा तत्व के अनुभव वाले मनुष्य को साधु-सन्त जीवित मुक्त कहते है। उसकी इस मुक्त अवस्था को ही निर्वाण व मोक्ष पद कहा है तथा और भी अपनी-अपनी भाषा व वर्णन शैली में कई नामों से पुकारा गया है। इस पर एक शब्द कबीर साहब का नीचे पढ़े :

जीवत मुक्त सोई मुक्ता हो

जब लग जीवन मुक्ता नाहिं, तब लग दु:ख सुख भुक्ता हो।
देह संग ना होवे मुक्ता, मुये मुक्ति कहां होई हो।

तीर्थवासी होए न मुक्ता, मुक्ति न धरणी सोई हो।
जीवित भ्रम की फांस न काटी, मुये मुक्ति की आशा हो।।

जल प्यासा जैसे नर कोई, सुपने फिरे प्यासा हो।
होवे अतीत बन्धन से छूटे, जहां इच्छा तहां जाई हो।।

बिना अतीत सदा बन्धन में, कित हूँ जाये न पाई हो।
आवागमन से गए छूट के, सुमिर नाम अविनाशी हो।।

कहे कबीर सोई जन गुरू हैं, काटी भ्रम की फांसी हो।।

प्यारे पाठकों। जब से मुझे अपने आप का यह अनुभव हो गया कि मैं उस परमात्मा का ही एक छोटा अंश हूँ जिसको सन्त सुरत कहते हैं, मेरा जीवन ही बदल गया। मेरे अनुभव में यह बात आ गई कि यह तो सब परमात्मा की ही लीला है। वह खुद ही यहां शरीर धारण करके सुरत रूप में मनुष्य में आकर खेल कर रहा है। इस ज्ञान से इस दुनिया में जो

भी बुराई, भलाई दिखती थी, वह सब समझ, विवेक, अनुभव व ज्ञान में बदल गया और इस दुनिया का सब खेल ही एक नाटकशाला दिखाई देने लगा। आप मेरा भाव समझ गए होंगे कि यहां जो कुछ भी हो रहा है, वह सब एक परमात्मा का सुन्दर खेल है। वह खुद एक है और यहां सुरत रूप में कई तरह का भेष व आकृति बना कर उसने इस दुनिया में एक सुन्दर खेल रच रखा है। नीचे दाता दयाल का शब्द पढ़िए :

यह जग नाटकशाला साधो यह जग नाटकशाला।

राजा रंक फकीर औलिया, दृश्य विचित्र निराला।
कोई तो ओढ़े शाल दुशाला, कोई सिर कम्बल काला।।

सुरत ने अद्‌भुत् भेष बनाए, नाचे नाच रसाला।
गावें भाव दिखावे छिन्न-छिन्न, खेले खेल निराला।

ब्रह्म वेद से रचा जगत को, विष्णु गदा ले पाला।
शिव संहार का साज सजावे, साथ भूत बेताला।।

नाचे दुर्गा कमला शारद, काली छवि विकराला।
सावित्री का राग गायत्री, सैन बैन का ताला।।

शंख नाद की धूम मची है, डमरू शोर कराला।
रारंग सारंग बजे सारंगी, बीन सितार सुहाला।।

श्रुति धुन है उद्‌गीत की बाणी, ओउम् ओउम् का ताला।
श्रोतागण सब सुनने आए, मन में भय निहाला।।

साधु दृष्टा साक्षी रूप है, सुख-दुख मन से टाला।
जिसने अपना रूप बिसारा, उर उपजा दु:ख शाला।।

साक्षी देखें विमल तमाशा, चित रहे सुखी सुखाला।
भूल भ्रम में जो कोई आया, सहे कर्म का भाला।।

रैन का सपना जग की लीला, स्वप्न धन और माला।
आंख खुली तब कुछ नहीं दरसा, गुप्त जो देखा भाला।।

सतगुरू सन्त रूप धरि आए, फकीरचन्द दयाला।
प्रेम प्याला हमें पिलाया, सहज किया मतवाला।।

ऊपर के शब्द से आपने समझ लिया है कि परमात्मा एक शक्ति है जो चान्द, सूरज तथा सभी लोक-लोकान्तरों से ऊपर है। उसकी ही किरणों या धाराओं से सब कुछ हो रहा है। उससे किरण रूप में धारें नीचे मण्डल बनाती हुई सुरत रूप में यहां आकर शरीर धारण करके खेल-खेल रही हैं। यानी यह लोक परमात्मा के खेलने या लीला करने का सुन्दर स्थान है। ऊपर वह एक है और यहां अनेक रूप, रंग बना कर खेल रहा है।

जब से मुझे इस अपने आत्म-तत्व का ज्ञान हुआ है, मैं एक मुक्त अवस्था में रहते हुए साक्षी भाव से इस परमात्मा की लीला का खेल देखकर जीवन अति आनन्द से जी रहा हूँ। और यही बात मैं आप लोगों को बताना चाहता हूँ कि आप किसी पूर्ण विवेकी महापुरूष से विधि सीख कर, थोड़ा साधन करके अपने निज रूप का अनुभव कर लें आपके सब दु:ख तकलीफ समाप्त हो जायेंगे। आपकी सेवा में एक ज्ञान योग का शब्द हरियाणा की भाषा शैली में लिखता हूँ :

इसका भेद बता मेरे अवधू, साबत करनी कर रहा तू।
डारी भूल जगत में आया, जित देखूं उड़ै तू ही तू।।
इसका भेद.....

कीड़ी में छोटा बन बैठा, हाथी के मैह बड्डा तू।
बना महावत ऊपर बैठा, हॉकन वाला तू ही तू।।
इसका भेद.....
चौरा के संग चौर कहावै, बदमाशा के संग मैं तू।
चोरी करके भागन लागा, पकड़न वाला तू ही तू।।
इसका भेद.....
माजाया के लठ बजवा दे, सिर फुड़वावन वाला तू।
थाने के मैह बन्द करवा दे, राजीनामा करा दे तू।।
इसका भेद.....
नर नारी के संग में विराजै, भिखारी के संग में तू।
झोली ठाह के मांगन चाल्या, घालन वाला तू ही तू।।
इसका भेद.....
दाता के मैह आप विराजै, दुनिया के मैह दिखै तू।
कहे कबीर सुनो भाई साधो, सतगुरू मिल गए न्यू के न्यू।।
इसका भेद.....

कहने का भाव यह है कि जिसको गुरू कृपा से अपने निज रूप का ज्ञान हो गया व अनुभव हो गया, वह मुक्त अवस्था या समस्थिति में रहता हुआ अपने प्रारब्ध कर्मों को भोगता हुआ, साक्षी भाव से परमात्मा की लीला का आनन्द लेता हुआ, ज्ञान योग में रहता हुआ प्रसन्नता से खुशी का जीवन जी सकता है। इसके लिए बाहर के पूर्ण अनुभवी या विवेकी ज्ञानी से यह ज्ञान मिल सकता है। परन्तु यह ज्ञान मनुष्य तभी समझ सकता है जब उसका मन योग से स्थिर हो गया हो। मेरा कहने का भाव यह है कि ज्ञानी कोई योग साधन या अभ्यास नहीं करता। वह ज्ञानयोग में रहते हुए साक्षी भाव से प्रभु की लीला का आनन्द लेता है। इस ज्ञान को प्राप्त करने के लिए मन की एकाग्रता व सत्संग की जरूरत है। यह कोई लम्बा कोर्स नहीं है, केवल छ: महीने या एक-दो साल की साधना है। परन्तु यह अधिकार व संस्कार की बात है। वैसे अनुभूति तो

केवल किसी ज्ञानी के दर्शन से ही हो सकती है परन्तु समझ, विवेक और ज्ञान के लिए मन की एकाग्रता के बाद ही साधक सत्संग सुन कर अपने जन्म-जन्मान्तरों के सभी कर्मों को ज्ञान की अग्नि में जलाकर भस्म कर सकेगा। जब तक योग से चित्तवृत्ति का निरोध नहीं होगा तब तक सतगुरू का सत्संग ठीक से समझ में नहीं आता है।

योग मंजिल नहीं है। योग से केवल चित्त वृत्ति का निरोध होता है। मंजिल तो अपने निज रूप का अनुभव और ज्ञान की प्राप्ति है। जब से मुझे अपने निज रूप या आत्म तत्व का अनुभव हुआ है तब से मैं मुक्त अवस्था में रहता हुआ, ज्ञान योग से इस जीवन-लीला को साक्षी भाव से देखता हुआ अपने प्रारब्ध कर्म को भोगता आ रहा हूँ। जैसे कर्म गति के एक शब्द में कहा है :

''सब भोगे बारम्बार अवश्य फल कर्म किए का।''

अर्थात् मनुष्य अपने ही किए शुभ और अशुभ कर्म भोगने यहां आता है और इसी का नाम जीवन लीला है। यह कर्मों का लेखा-जोखा तब तक पूरा नहीं होता जब तक मनुष्य अपना स्वयं का ज्ञान या निज रूप का अनुभव नहीं कर लेता। जब मनुष्य को अपने निज रूप का अनुभव हो जाता है तब उसके सब योग साधन, अभ्यास पूरे हो जाते हैं। मुक्ति, निर्वाण तथा मोक्ष अवस्था में जीते हुए, अपने आपको साक्षी भाव में रखते हुए वह परमात्मा की लीला देखता रहता है और सब प्रकार के भ्रम, शंकाओं से मुक्त रहते हुए संसार में जीवन लीला करता है। आवागमन का उसे कोई भ्रम नहीं रहता है। सहज में सुरत जहां से आई है, उस परमात्मा तत्व में लीन होती रहती है, वहां से उत्थान होता रहता है और शब्द सुरत का अनुभव होकर चेतनता आती रहती है। यह शरीर छोड़ने के बाद क्या घटित हो ? मैं कुछ नहीं कह सकता हूँ।

मैं प्रवृत्ति मार्ग में जीवन लीला करते हुए सहज ही निवृत्ति मार्ग का अनुभव बहुत लम्बे समय तक करता आया हूँ और अब 83 साल की आयु में यह जीवन लीला ज्ञान योग में रहते हुए व्यतीत कर रहा हूँ।

मैंने आपको ज्ञान योग समझाने के लिए कई शब्द लिखे हैं। एक-दो ज्ञानयोग के शब्द जो कबीर साहब ने लिखे हैं, आपकी सेवा में लिख रहा हूँ।

''साधो एक रूप सब माहि।''

अपने मन ही विचार के देखो और दूसरा नाहीं।

एकै त्वचा रूधिर पुनि एकै, विप्र शूद्र के माही।
कहीं नारी कहीं नर होई बोले, गैब पुरूष वह आहीं।।

आपे गुरू होय मन्त्र देत है, शिष्य होए सबे सुनाही।
जो जस गहे लहै तस मार्ग, तिनके सतगुरू आही।।

शब्द पुकार सत मैं भाषो, अन्तर राखो नाहि।
कहै कबीर ज्ञान जेहि निर्मल, विरले ताहिं लखाहि।।

कबीर साहब का इस शब्द से क्या भाव है ? यह तो वही जानते होंगे परन्तु मैंने जो समझा है और जो मेरे अनुभव में आया है वह यह है कि सब मनुष्यों में एक ही परमात्मा सुरत रूप में खेल रहा है और इस अनुभव को मनुष्य सतगुरू के सत्संग में समझ कर योग साधन से चित्तवृत्ति का निरोध करके ज्ञान से मुक्त अवस्था में रहकर प्राप्त कर सकता है। इसी भाव से सम्बन्धित एक दूसरा शब्द कबीर का इस प्रकार है :

कहूं उस देश की बतियां, जहां नहीं होत दिन रतियां।

नहीं जहां चन्द्र और तारा, नहीं उजियारा अंधियारा।
नहीं वहां पवन और पानी, गए वह देश जिन जानी।।

नहीं वहां धरणी आकाशा, करे कोई सन्त वहां वासा।
वहां गम काल की नाहीं, नहीं वहां धूप और छाई।।
न योगी योग से पावे, न तप सी देह जल जावे।
सहज में ध्यान से पावे, सुरत का खेल जिन्हें आवे।।

सोहंग नाद नहीं भाई, न बाजे शंख शहनाई।
निःअक्षर जाप वहां जापे, उठत धुन्न-सुन्न से आपै।।

मन्दिर में दीप बहु भारी, नयन बिन भई अंधियारी।
कबीरा देश वो न्यारा, लखै कोई नाम का प्यारा।।

इस सुरत शब्द का साधन करते-करते जो मनुष्य की सुरत शब्द को सुनती है तो सुनते-2 सहज ही शब्द में लीन हो जाती है और फिर प्राकृतिक रूप से उसका उत्थान होता है और शब्द का अनुभव होकर वह चेतनता में आती है। इस अनुभव के बाद और सतगुरू के सत्संग से साधक शेष जीवन यानी प्रारब्ध को साक्षी भाव में लीला देखते हुए अति प्रसन्नता में जीवन जीता है। यह मेरा अनुभव है कोई दावा नहीं कि यही सच्चाई है। मेरी अपनी जीवन लीला में सहज ही सुरत कई बार शब्द में लीन हो जाती है व सब कुछ समाप्त हो जाता है। जैसे मनुष्य गहरी नींद में चला जाता है और फिर अपने आप प्राकृतिक रूप से वहां से उत्थान होता है। इसी प्रकार कभी तो सुरत-शब्द का अनुभव बना रहता है और कभी मेरी सुरत शब्द का अनुभव करके लीन हो जाती है और फिर चेतनता या होश में आकर मैं जाग्रत हो जाता हूँ। जैसे कहा है -

शब्द प्रकट तब धरिया नाम, शब्द गुप्त तब हुआ अनाम।

ॐ शान्ति शान्ति शान्ति

❑❑❑

अब तक प्रकाशित पुस्तकों की सूची

क्र.सं.	पुस्तक का नाम	प्रथम संस्करण	द्वितीय सं०	तृतीय सं०
1.	लाल कमल	1000 प्रतियां 4/03	2000 प्रतियां 8/05	4000 प्रतियां 12/06
2.	सहज योग	2000 प्रतियां 8/03	3000 प्रतियां 8/05	4000 प्रतियां 7/07
3.	सुखी जीवन का रहस्य	3000 प्रतियां 10/03	4000 प्रतियां 8/05	4000 प्रतियां 2/07
4.	मानव धर्म व अध्यात्म ज्ञान	4000 प्रतियां 1/04	4000 प्रतियां 9/05	---
5.	मानव जीवन का सुखमय सफर	4000 प्रतियां 3/04	4000 प्रतियां 9/05	---
6.	मनुष्य का कर्त्तव्य और धर्म	4000 प्रतियां 6/04	4000 प्रतियां 2/07	---
7.	प्रश्नोत्तरी ज्ञान गंगा	4000 प्रतियां 10/05	4000 प्रतियां 2/07	---
8.	मेरी धार्मिक खोज	4000 प्रतियां 5/05	4000 प्रतियां 2/07	---
9.	Secret of Happy Life	2000 प्रतियां 4/05	2000 प्रतियां 2/07	---
10.	ज्ञान योग	4000 प्रतियां 4/06	4000 प्रतियां 9/07	---
11.	तत्व ज्ञान दर्पण	4000 प्रतियां 5/06	4000 प्रतियां 9/07	---
12.	योग मणि	4000 प्रतियां 6/07	---	---
13.	कैलेण्डर	1000 प्रतियां 3/04	2000 प्रतियां 10/05	4000 प्रतियां 2/07